ग्रीन रिवोल्ट

हरित-नीरा रहे वसुंधरा

पेजः 4

भाषाओं के साथ विलुप्त हो रही पुरखों की औषधीय जानकारी

रविवारीय, 13 - 19 जून 2021 वर्ष- दो, अंक-45, रांची, कुल पृष्ठ 4 हिन्दी साप्ताहिक R.N.I. No. JHAHIN/2019/78094 www.greenrevolt.news मूल्यः 5 रूपये

ग्रीन रिवोल्ट के पाठकों से आग्रह है कि आप पर्यावरण, कृषि, जल संरक्षण, पशुपालन, बागवानी , पेट्स, वृक्षारोपण से संबंधित खबरें, समस्यायें, लेख,सुझाव, प्रतिक्रियायें या तस्वीरें हमें अवश्य भेजें। हमारा इमेल एवं ह्वाट्सएप नंबर है।

greenrevolt2019@gmail.com

9798166006

गंगा में कोरोना वायरस के होने की कोई आशंका नहीं: प्रोफेसर बारीक

गंगा में कोरोना विषाणु की उपस्थिति को लेकर प्रोफेसर एसके बारिक ने कहा है कि गंगा से लिए गए नमूनों में कोरोना विषाणु की उपस्थिति की आशंका बहुत कम है। विषाणु का भी जीवन है और वह मृत हो चुका होगा, मेरा अनुमान है कि वह पानी में जीवित नहीं रह पाएगा। नमूनों का अभी एक स्तर का परीक्षण हो चुका है और आगे के लिए जांच जारी है, इसके निर्णायक परिणाम आना बाकी हैं। यह परिणाम केंद्रीय जल शक्ति मंत्रालय के जरिए जारी किए जाएंगे।

प्रो .बारिक लखनऊ स्थित आईआईटीआर के निदेशक हैं। एक जून से लेकर 5 जून के बीच बिहार में पटना, भोजपुर, सारण और बक्सर से गंगा के नमूने एकत्र किए गए हैं। गंगा नदी में हाल के कुछ महिनों में अधजले और समूचे शरीर वाले करीब 71 संदिग्ध कोरोना पीड़ित शवों को प्रवाहित किया गया था। इसके बाद यह आशंका थी कि गंगा नदी में भी कोरोना वायरस की उपस्थिति हो सकती है।

अमीर देशों के एक व्यक्ति के लिए प्रति वर्ष कटते हैं चार पेड़

वरीय संवाददाता

पर्यावरण बचाने से लेकर विभिन्न स्तरों के प्रदूषण और विकासात्मक कार्यों के कारण बर्बादी पर सबसे ज्यादा शोध यूरोप और अमेरिका में होते हैं और उनके भारतीय एजेंट उसे आम भारतीयों तक पहुंचाते हैं। जिसमें अक्सर वैश्विक पर्यावरण के नुकसान के पीछे भारत जैसे देशों को जिम्मेवार बताया जाता है।

अभी प्रधानमंत्री जी7 देशों को संबोधित कर रहे हैं और उनके पक्षपाती रवैयों पर दोटूक बोल भी रहे हैं। यही जी7 देश ही अपने खान पान शौक के कारण पर्यावरण को बहुत नुकसान पहुंचा रहे हैं। स्वीडन की ग्रेटा थंबर्ग के उस डायलॉग को बहुत चर्चा मिली थी जब उन्होंने कई बड़े देशों के राष्ट्राध्यक्षों के बीच कहा था कि *हाउ डेयर यू?* पर इसके उलट भी एक तस्वीर है वो ये कि इन विकसित और अमीर देशों के नागरिकों के भोजन और शौक के लिये पर्यावरण की बलि चढ रही है।

एक रिपोर्ट के अनुसार अमीर देशों के नागरिकों के खाने का शौक पूरा करने के लिए प्रतिवर्ष चार पेड़ों को काटा जाता है। रिपोर्ट में इसके लिए कॉफ़ी, चॉकलेट, पाम आयल और मीट जैसे उत्पादों के बढ़ते उपभोग को जिम्मेवार माना है। जी7 देशों के हर व्यक्ति के लिए प्रतिवर्ष औसतन 3.9 पेड़ों को काटा जा रहा है। यह जानकारी हाल ही में अंतराष्ट्रीय जर्नल नेचर इकोलॉजी एंड इवोल्यूशन में प्रकाशित शोध में सामने आई है। रिपोर्ट में इसके लिए कॉफ़ी, चॉकलेट, पाम आयल और मीट जैसे उत्पादों के उपभोग को जिम्मेवार माना है।

अध्ययन के अनुसार एक तरफ जहां जी 7 देशों जिसमें फ्रांस, जर्मनी, इटली, जापान, अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम और कनाडा शामिल हैं।और कई उभरते हुई अर्थव्यवस्थाओं जैसे भारत और चीन जैसे देशों में 2001 से 2015 के बीच जंगलों की कटाई में कमी देखी गई है, वहीं उनके आयात और बढ़ती खपत के कारण विदेशों में वनों की कटाई बढ़ गई है। उदाहरण के लिए यूके और जर्मनी में चॉकलेट की बढ़ती खपत के कारण आइवरी कोस्ट और घाना में वनों की कटाई बढ़ी है। जबकि अमेरिका, यूरोपीय संघ और चीन में बीफ और सोया की बढ़ती मांग से ब्राजील में वनों का विनाश हुआ है। इसी तरह चीन के लिए रबर की जरूरतों को पूरा करने के लिए उत्तरी लाओस में वनों को काटा गया था।

गौरतलब है कि ग्रुप ऑफ सेवन एक अंतर-सरकारी संगठन है जो दुनिया की सबसे बड़ी विकसित अर्थव्यवस्थाओं से बना है जिसमें फ्रांस, जर्मनी, इटली, जापान, अमेरिका,यूके और कनाडा शामिल हैं। यदि जंगलों की बात करें तो वो न केवल हमें जरुरी संसाधन देते हैं साथ ही वायु प्रदूषण और बढ़ते उत्सर्जन को भी नियंत्रित करते हैं। इनका विनाश न केवल जलवायु परिवर्तन के असर को बढ़ा रहा है साथ ही वन्य जीवों और जैव विविधता के लिए भी खतरा बनता जा रहा है। यह अपनी तरह का पहला अध्ययन है जो दुनिया के प्रत्येक देश द्वारा आयात की जा रही वस्तुओं और उससे जुड़े जंगलों के विनाश के उच्च-रिज़ॉल्यूशन वाले मानचित्रों से जोड़ता है। शोध से पता चला है कि इन वस्तुओं के उपभोग और जंगलों के विनाश के बीच सीधा सम्बन्ध है।

इस शोध में शोधकर्ताओं ने सभी प्रकार के जंगलों पर विचार किया है जिसमें उत्तरी अक्षांश के बोरियल वनों से लेकर कार्बन-समृद्ध मैंग्रोव और वर्षा वन तक सभी शामिल हैं। शोधकर्ताओं ने मांस, लकड़ी, कॉफी, सोयाबीन और कोको सहित कृषि और वानिकी से जुड़ी वस्तुओं के व्यापार और उसके प्रभावों की जांच की थी। विश्लेषण के अनुसार उष्णकटिबंधीय वर्षावन जो भूमि पर स्टोर कुल कार्बन का करीब एक चौथाई हिस्सा अकेले स्टोर करते हैं उनपर विशेष रूप से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का प्रभाव और खतरा बढ़ा है। अंतरराष्ट्रीय व्यापार से जंगलों के विनाश के साथ वहां जैवविविधता को भी बहुत ज्यादा नुकसान पहुंचा है। इनमें अमेजन, दक्षिण-पूर्व एशिया, मेडागास्कर और लाइबेरिया के जंगल शामिल हैं। सबसे दुखद कि सभी विकसित विकासशील देशों की मंशा सिर्फ इनके भयंकर दोहन की है।

भारत और चीन के कारण भी छह गुना बढ़ी हैं जंगलों की कटाई

भारत और चीन में 2000 के बाद से जंगल कटाई में खासी वृद्धि हुई है।2001 से 2014 के बीच इन दोनों देशों में वन विनाश में छह गुना वृद्धि हुई है। शोध के अनुसार हालांकि यदि प्रति व्यक्ति के हिसाब से देखें तो जी7 देशों द्वारा वनों का ज्यादा विनाश हो रहा है। जिनके कारण प्रति व्यक्ति औसतन 4 पेड़ों को काटा जा रहा है। वहीं अमेरिका में 2015 में प्रति व्यक्ति 5 पेड़ों को काटा गया था। जबकि यूके में औसतन प्रति व्यक्ति दो पेड़ काटने पड़ रहे हैं। 2001से 2015 के बीच यूके की जरूरतों को पूरा करने के लिए करीब 99 फीसदी तक जंगल विदेशों में काटे गए थे। हालांकि भारत और चीन को देखें तो यह नुकसान काफी कम है, पर उसमें बड़ी तेजी से वृद्धि हो रही है।

उधर विश्व पर्यावरण दिवस मना रहे थे यहां पेड़ काट दिया

जब रांचीवासी पांच जून को विश्व पर्यावरण दिवस मना रहे थे, पेड़ लगाते हुये अपनी तस्वीरें खिंचवा रहे थे। उसी समय रांची विश्वविद्यालय के मोराबादी कैंपस में एक बहुत पुराने कटहल पेड़ की डालियों को दूकान बनाने के लिये काट दिया गया। पेड़ पीजी आर्ट्स ब्लॉक कैंपस की शान था, जिससे छात्रों की असंख्य स्मृतियां जुड़ी हुयी हैं। इससे छात्रों में आक्रोश है। लेकर रांची विवि छात्र संघ के पूर्व अध्यक्ष तनुज खत्री ने कुलपति से जाकर शिकायत की और कैंपस में दूकान निर्माण को रोकने की मांग की है।

सीसीएल और चतरा जिला प्रशासन के बीच एमओयू

संवाददाता

रांची : सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड (सीसीएल) तथा चतरा जिला प्रशासन के बीच समझौता ज्ञापन (एमओयू) किया गया। इस एमओयू के अंतर्गत चतरा जिला प्रशासन को लगभग 3 करोड़ रूपये प्रदान किया जायेगा जिससे जिले के 100 आंगनबाड़ी केन्द्र को मॉडलआंगनबाड़ी केन्द्र में विकसित करने के साथ-साथ 30 स्कूलों में 54 डिजिटल क्लास रूम एवं कम्यूनिटी हेल्थ सेंन्टर, टंडवा में ऑक्सीजन प्लांट स्थापित किया जायेगा। जिला प्रशासन की ओर से जिला समाज कल्याण अधिकारी, जिला शिक्षा पदाधिकारी, मुख्य सिविल सर्जन एवं सीसीएल की ओर से महाप्रबंधक (सीएसआर)ए के सिंह ने एमओयू पर हस्ताक्षर किए। एमओयू के अंतर्गत सीसीएल द्वारा जिला प्रशासन को 100 आंगनबाड़ी केन्द्र को मॉडल आंगनबाड़ी केन्द्र में विकसित करने केलिए 1.5 करोड़ रूपयेदिये जायेंगे। प्रत्येक स्कूल पर 1.5 लाख रूपये खर्च किये जायेंगे जिससे भवन की मरम्मत, वॉल पेंटिंगएवं बच्चों के लिए खेल उपकरण आदि उपलब्ध कराया जायेगा। इसी प्रकार चतरा जिले के 30 स्कूलों में 54 डिजिटल क्लास रूम के लिए 1.03 करोड़ रूपये खर्च किये जायेंगे। साथ ही कम्यूनिटी हेल्थ सेंन्टर, टंडवा में ऑक्सीजन प्लांट की स्थापना के लिए 60 लाख रूपया का एमओयू किया गया।

आंगनबाड़ी केन्द्र का नवीनीकरण, डीजिटल क्लास रूम एवं ऑक्सीजन प्लांट स्थापित किये जायेंगे

इस अवसर पर सीएमडी पी.एम. प्रसाद ने कहा कि राज्य एवं अपने सभी स्टेकहोल्डर्स के सर्वांगींण विकास के लिए सीसीएल प्रतिबद्ध है और इस दिशा में राज्य सरकार के सहयोग से निरंतर कार्य किया जा रहा है। यह एमओयू चतरा जिला के विकास में मील का पत्थर साबित होगा। निदेशक (कार्मिक)विनय रंजन ने कहा कि स्थानीय निवासियों को इस एमओयू से निश्चित रूप से लाभ मिलेगा। इस अवसर पर जिला नोडल अधिकारी आशीष कुमार, मुख्य प्रबंधक एस.एस. लाल, गौरव तिवारी, श्रीमती साक्षी होरो, जितेन्द्र कुमार व अधिकारीगण उपस्थित थे। सीसीएल ने पिछले वित्तीय वर्षों में रांची,रामगढ़, बोकारो, हजारीबाग, लातेहार में 628 आंगनबाड़ी केन्द्रों को 09 करोड़ 42 लाख की लागत से मॉडल आंगनबाड़ी केन्द्र के रूप में विकसित किया है।

बीएयू ने किया उलीहातू में बिरसा बीज आच्छादन कार्यक्रम का शुभारंभ

पशुओं के बरसाती बीमारी की दवा का वितरण किया गया

रांची : डायरेक्टर एक्सटेंशन एजुकेशन डॉ। जगरनाथ उराँव के नेतृत्व में कृषि वैज्ञानिकों के दल ने शनिवार को भगवान बिरसा मुंडा की जन्मस्थली उलीहातू गाँव का दौरा किया। मौके पर विवि की ओर से पूरे प्रदेश में लागु की जा रही बिरसा बीज आच्छादन कार्यक्रम की शूरूआत की गयी। गाँव से 50 बिरसा किसान का चयन किया गया। सभी किसानों को मोटा अनाज मडुआ (रागी) की उन्नत किस्म ए 404 के 2 - 2 बीज का वितरण किया गया। इस अवसर पर शस्य वैज्ञानिक डॉ आरपी मांझी ने किसानों को मडुआ की वैज्ञानिक खेती की तकनीकी जानकारी दी।

मौके पर पशु वैज्ञानिकों के दल ने गाँव में पशुओं की बरसाती बीमारी का अध्ययन किया। पशुपालकों को बरसाती बीमारी एवं रोग की पहचान एवं उपचार की जानकारी दी। दल में शामिल डॉ अभिषेक कुमार, डॉ बधनु उराँव एवं डॉ पंकज सेठ ने उलीहातू गाँव के करीब 50 घरों में जाकर पशुओं के उपचार के लिए कृमि नाशक, घाव एवं अपच की दवा एवं मिनरल मिक्सचर का वितरण किया। डॉ अभिषेक कुमार ने बताया कि इस गाँव के करीब सभी परिवार पशुपालन से जुड़े है। डॉ पंकज सेठ ने बताया कि गाँव के पशुपालकों के बीज उन्नत नस्ल के पशुओं की काफी मांग है। इस क्षेत्र के किसानों का उन्नत पशु प्रबंधन से आर्थिक स्थिति में सुधार लाया जा सकता है।

डायरेक्टर एक्सटेंशन एजुकेशन डॉ. जगरनाथ उराँव ने बताया कि कुलपति के निर्देश पर उलीहातू गाँव को एग्रो टूरिज्म केंद्र के रूप में विकसित करने की पहल की जा रही है। किसानों के बीच धान, अरहर एवं तिल के उन्नत बीज की काफी मांग है। विवि उन्नत बीज उपलब्ध कराने की दिशा में हर संभव सहयोग करेगी। उन्होंने कहा कि कुलपति के निर्देश पर बिरसा बीज आच्छादन कार्यक्रम की शूरूआत की गयी है।

विवि द्वारा सभी 16 जिलों के कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से यह कार्यक्रम खरीफ मौसम में चलेगा। प्रत्येक जिले में 20 बिरसा किसान का चयन कर उन्नत किस्मों के बीज का वितरण किया जायेगा।

देश का पहला शहर जहां चलेंगे सिर्फ इलेक्ट्रिक वाहन चलेंगे

एजेंसियां

अहमदाबादः गुजरात का केवड़िया इलाका स्टैच्यू ऑफ यूनिटी के रूप में सरदार वल्लभ भाई पटेल की 182 मीटर लंबी मूर्ति के लिए ही नहीं, बल्कि देश के ऐसे पहले शहर के रूप में भी जाना जाएगा, जहां केवल इलेक्ट्रिक वाहन चलेंगे।

स्टैच्यू ऑफ यूनिटी क्षेत्र विकास और पर्यटन संचालन प्राधिकरण ने कहा कि वह गुजरात के केवड़िया में 'देश का पहला इलेक्ट्रिक व्हीकल -ओनली एरिया' विकसित करेगा, जहां केवल इलेक्ट्रिक वाहनों को आवाजाही की अनुमति होगी। विश्व पर्यावरण दिवस पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने गुजरात के आदिवासी बहुल नर्मदा जिले के केवड़िया क्षेत्र को देश का पहला इलेक्ट्रिक वाहन शहर बनाने की घोषणा की थी। उसके एक दिन बाद प्राधिकरण ने इस योजना की जानकारी दी है।

मेकॉन, ईईएसएल के बीच हुआ एमयू

संवाददाता रांचीः मेकॉन लिमिटेड ने ईईएसएल के साथ एक एमओयू पर हस्ताक्षर किए हैं, इस समझौते के तहत इस्पात के क्षेत्र में एवं खनन उद्योग में , विभिन्न ऊर्जा दक्षता एवं संसाधन संरक्षण उपायों के कार्यान्वयन के लिए एक रणनीतिक साझेदारी बनायी जा रही है । एमओयू पर हस्ताक्षर यूके विश्वकर्मा, मुख्य महाप्रबंधक (विपणन), मेकॉन और अनिल चौधरी, मुख्य महाप्रबंधक एवं प्रमुख (संचालन), ईईएसएल ने आर एच जुनेजा, निदेशक , मेकॉन, एस के वर्मा, निदेशक , मेकॉन,वेंकटेश द्विवेदी, निदेशक , ईईएसएल और एस गोपाल, निदेशक (वाणिज्यिक), ईईएसएल और दोनों कंपनियों के अन्य वरिष्ठ अधिकारियों की गरिमामयी उपस्थिति में किया।

इस सहयोग के तहत, ईईएसएल और मेकॉन इस्पात और खनन उद्योग में ऊर्जा दक्षता, स्वच्छ ऊर्जा से संबंधित समाधानों के कार्यान्वयन की दिशा में सहयोगात्मक रूप से काम करेंगे। मेकॉन के निदेशक (वित्त) आरएच जुनेजा ने कहा के ईईएसएल की ऊर्जा दक्षता और स्वच्छ ऊर्जा में अद्वितीय विशेषज्ञता और मेकॉन की लौह एवं इस्पात के क्षेत्र में विश्वसनीय उपस्थिति और अनुभव ऊर्जा बचत परियोजना में प्रभावी साबित होगा ।

मेकॉन के निदेशक (वाणिज्यिक) एस के वर्मा ने कहा कि यह समझौता ज्ञापन दोनों कंपनियों की ताकत और विशेषज्ञता के तालमेल को आगे बढ़ाएगा और साथ साथ, ऊर्जा गहन लौह और इस्पात उद्योग में विभिन्न ऊर्जा दक्षता उपायों को लागू करने में मददगार साबित होगा। ईईएसएल के कार्यकारी निदेशक (लाइटिंग) एस पी गार्नाइक ने कहा, एक स्वच्छ और हरित भविष्य की ओर बढ़ने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में ऊर्जा दक्षता समाधानों को लागू करना महत्वपूर्ण हो गया है। मेकॉन के साथ यह साझेदारी विशेष रूप से इस्पात और खनन उद्योगों में ऊर्जा दक्षता की अपार संभावनाओं की दिशा में एक बड़ा कदम है। दुनिया के सबसे बड़े ऊर्जा दक्षता पोर्टफोलियो को संभालने में हमारी विशेषज्ञता और मेकॉन से तकनीकी सहायता ऊर्जा बचत और पर्यावरणीय लाभ को सक्षम करने में सफलता हासिल करेगी ।

पौधों में जान डाल देते है जीवाणु खाद यानि जैव उर्वरक

डॉ. डी . के . शाही

जैव उर्वरक एक विशेष प्रकार का सूक्ष्म जीवाणु है, जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन (नत्रजन) का स्थिरीकरण करते है। सेल्यूलोज एवं कार्बनिक पदार्थ को भूमि में सड़ाते और फ़ास्फ़रोस को घुलनशील बनाते है। इसके उपयोग से मिट्टी में पोषक तत्वों की वृद्धि होती है और मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है।

बीएयू के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग के अध्यक्ष डॉ डीके शाही बताते है कि कृषि वैज्ञानिक शोधों में किसानों के खेतों के मिट्टी की उर्वराशक्ति को बनाये रखने एवं अन्य पोषक तत्वों की पौधों में उपलब्धता एवं इसकी आपूर्ति बढाने में जीवाणु खाद जैसे- राईजोबियम कल्चर, एजोटोबेक्टर कल्चर, एजोस्पिरिलम कल्चर, नील हरित शैवाल कल्चर, स्फूर घोलक जीवाणु कल्चर, माइकोराइजा कल्चर एवं नील हरित शैवाल का उपयोग लाभदायक पाया गया है।

जैव उर्वरक (जीवाणु खाद) के प्रयोग से होने वाले लाभ

जैविक खाद के उपयोग से मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक दशा में सुधार होता है। इसके प्रयोग से जड़ो का विकास एवं अंकुरण अच्छा होता है। रासायनिक उर्वरक की बचत होती है एवं अगली फसल को भी यह लाभ पहुँचाता है। यह जैविक खेती के लिए उपयुक्त खाद है।

राइजोबियम कल्चर से लाभ

इस कल्चर खाद का उपयोग मूंग, उरद, अरहर, सोयाबीन, मटर, चना, मूंगफली, मसूर एवं बरसीम फसल में करते है। अलग- अलग फसलों के लिए अलग झ अलग राइजोबियम कल्चर के पैकेट होते है। इसके प्रयोग से 35 से 40 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेयर नत्रजन का लाभ होता है। जो 77- 88 कि. ग्रा. यूरिया के बराबर है। साथ ही उपज में करीब 10 प्रतिशत वृद्धि होती है।

एजोटोबैक्टर कल्चर के लाभ

इस कल्चर का प्रयोग गेहूँ,जौ, मक्का, बैंगन, टमाटर, आलू एवं तेलहनी फसलों में करते है। इसके प्रयोग से फसल को 20 से 25 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेयर नत्रजन का लाभ होता है। जो 44 - 55 किग्रा. यूरिया के बराबर है। अनाज वाली फसलों में10-20 % एवं सब्जियों में 10 %तक वृद्धि पायी गयी

एजोस्पिरिलम कल्चर के लाभःइस कल्चर का प्रयोग ज्वार, बाजरा, मडुआ, मक्का एवं चारे वाली फसलों की पैदावार बढ़ाने के लिए करते है। इस जीवाणु खाद के प्रयोग से 20 से 25 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेयर नत्रजन की प्राप्ति होती है। जो 44 — 55 कि. ग्रा. यूरिया के बराबर है।

पी.एस. बी. कल्चर (स्फूर घोलक जीवाणु खाद) :

यह कल्चर अम्लीय मिट्टी में बेहद लाभकारी है। इसका प्रयोग सभी फसलों जैसे झ अनाज, दलहनी, तेलहनी एवं सब्जी फसलों के बीज को उपचारित कर फसलों की खेती में स्फूर (फॉस्फेट) की उपलब्धता बढ़ाने के लिए करते है। इससे प्रयोग से करीब 25-30 प्रतिशत स्फूर पौधों को मिलता है एवं उपज में 55 - 66 प्रतिशत की वृद्धि होती है।

वाम कल्चर (माइकोराइजा)

इस कल्चर का प्रयोग सभी प्रकार के अनाज, दलहन, तेलहन एवं सब्जी फसल में करते हैं। यह पौधों में स्फूर की उपलब्धता को बढ़ाता है।

नील हरित शैवाल (ब्लू ग्रीन अल्गी)

यह कल्चर वायु से नाइट्रोजन प्राप्त करते है। इसे धान फसल में प्रयोग किया जाता है। इसके प्रयोग से प्रति हेक्टेयर 20-25 कि. ग्रा. नाइट्रोजन की प्राप्ति होती है, जो 44 - 55 कि. ग्रा. यूरिया के बराबर है।

जैव उर्वरक प्राप्ति के क्या हैं मुख्य स्त्रोत?

झारखण्ड के एकमात्र बिरसा कृषि विवि, कांके में फसलों के अनुरूप जीवाणु खाद बनाई जाती है. जो 15 रूपये प्रति पैकेट की दर से फसलों की बुवाई से पहले उपलब्ध रहता है. जीवाणु खाद या कल्चर खरीदते समय यह देख लेना चाहिए कि पैकेट किस फसल के लिए है और उपयोग की अंतिम तिथि क्या है ?

डॉ. शाही बताते है कि दलहनी फसलों में जैव उर्वरकों के प्रयोग से वायुमंडल में उपस्थित नाइट्रोजन पौधों को अमोनिया के रूप में सुगमता से उपलब्ध होती है. भूमि में पहले से मौजूद अघुलनशील फास्फोरस आदि तत्व घुलनशील होकर पौधों को आसानी से उपलब्ध होते हैं. चूंकि जीवाणु प्राकृतिक है, इसलिए इनके प्रयोग से भूमि की उवर्रा शक्ति बढ़ती है और पर्यावरण पर विपरीत असर नहीं पडता. जैव उर्वरक रासायनिक उवर्रकों का पूरक है, रासायनिक उवर्रकों के पूरक के रूप में जैव उवर्रकों के प्रयोग से हम बेहतर परिणाम प्राप्त कर सकते हैं।

ग्रीन रिवोल्ट
हरित-नीरा रहे वसुंधरा

अक्षय ऊर्जा का बंटाढार

एक तरफ तो देश में अक्षय ऊर्जा के बड़े-बड़े लक्ष्य तय किए जा रहे हैं तो दूसरी तरफ इस क्षेत्र में तय नियम-कानून को लेकर लापरवाही बरती जा रही है। सबसे हालिया उदाहरण बना है उत्तर प्रदेश जहां सरकार ने पिछले हफ्ते निजी डेवलपर्स के साथ किए गए समझौते को रद्द कर दिया है। वह भी बिना कोई वजह बताए। ऐसे ही चलता रहा तो ऊर्जा क्षेत्र में जो बड़े लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं उसके लिए जरूरी आर्थिक निवेश पर संकट आ सकता है। विशेषज्ञ इस बात पर सहमत दिखते हैं। पर पहले लक्ष्य की बात करें। 2015 में भारत सरकार ने घोषणा की कि 2022 तक अक्षय ऊर्जा की 175 गीगावाट की क्षमता विकसित की जाएगी। अब महज साल भर का समय बचा है और कुल 95 गीगावाट का लक्ष्य हासिल किया जा सका है। यह लक्ष्य तो हासिल होने से रहा! दूसरी तरफ 2030 तक अक्षय उर्जा का 450 गीगावाट क्षमता विकसित करने का लक्ष्य तय किया गया है। इस बीच देश के सबसे अधिक आबादी वाला राज्य उत्तर प्रदेश भी उन राज्यों में शामिल हो गया है जिन्होंने अपने राज्य में सोलर प्लांट लगाने वाली कंपनियों से हुए समझौते रद्द किए। वजह थी, किसी नए प्रोजेक्ट में कुछ कंपनियों ने सौर ऊर्जा से बनने वाली बिजली के नए और कम दाम बताए। विशेषज्ञों का मानना है कि सरकारें अगर इस तरह पुराने समझौतों को रद्द करती रहेंगी तो इससे न केवल अल्पकालिक लक्ष्यों को हासिल करना मुश्किल होगा बल्कि जो दूरगामी लक्ष्य तय किए गए हैं उनके लिए निवेश लाना भी मुश्किल हो सकता है। खासकर स्वच्छ ऊर्जा से संबंधित लक्ष्य की खातिर। उत्तर प्रदेश का ही उदाहरण लें। यहां 10 जून, 2021 तक महज 3,878 मेगावाट अक्षय ऊर्जा की क्षमता स्थापित हो पायी है। जबकि वर्ष 2017 में भारत सरकार ने राज्य में 2022 तक 14,221 मेगावाट अक्षय ऊर्जा की क्षमता स्थापित करने का अनुमान लगाया था। बिना कोई कारण बताए, राज्य सरकार ने 500 मेगावाट का पीपीए रद्द कर दिया। नीलामी 2020 में हुई थी और सऊदी अरब के अल जोमिया सहित चार कंपनियों ने 3.17 रुपये प्रति किलोवाट से 3.18 रुपये प्रति किलोवाट की बोली लगाई थी। राज्य सरकार का इससे भी सस्ते दर पर बिजली पाने की इच्छा स्वाभाविक है। क्योंकि देश में केवल छह महीने पहले 1.99 रुपये प्रति यूनिट की कीमत की बोली लगी है। लेकिन सवाल यह है कि हर बार नई कीमत का पता चलने पर पुराने समझौते रद्द करना क्या उचित है !इस बढ़ती प्रवृत्ति से भारत के नियम-कानून और उसे पालन कराने वाली संस्थाओं पर बड़ा सवालिया निशान लगता है !

राज्य सरकारें कम रेट पर बिजली उत्पादन कर के देने वाली नयी कंपनियों के प्रस्ताव के चक्कर में पुराने करार किये गये कंपनियों से समझौते रद्द कर दे रही हैं। सौर ऊर्जा के लिये निजी डेवलपर्स के साथ समझौतों को उत्तर प्रदेश के पहले ऐसा ही काम आंध्र प्रदेश, राजस्थान, गुजरात जैसे कई अन्य राज्यों में भी हो चुका है।

केवल गर्म मौसम ही कोरोनावायरस को फैलने से नहीं रोक सकता

शोधकर्ताओं ने बताया कि हर डिग्री सेल्सियस तापमान में वृद्धि होने पर लोगों के संक्रमित होने की संख्या में लगभग 0.04 की कमी आई।

मौसम किस तरह वायरस को फैलाने या रोकने में अहम भूमिका निभाता है, इसी को जानने के लिए एक अध्ययन किया गया है। नए अध्ययन से पता चलता है कि कोरोनावायरस संक्रमण की दर अलग-अलग मौसम में अलग-अलग होती है। यह सही है कि संक्रमण के प्रसार की दर गर्मियों में कम होती है, लेकिन इस प्रसार को रोकने में केवल गर्म मौसम होना ही काफी नहीं है। इस अध्ययन की अगुवाई लंदन के इंपीरियल कॉलेज के शोधकर्ताओं ने की है। यह अध्ययन प्रोसीडिंग्स ऑफ द नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज में प्रकाशित हुआ है।शोधकर्ता बताते है कि तापमान और जनसंख्या घनत्व सबसे महत्वपूर्ण कारक हैं, जो यह निर्धारित करते हैं कि वायरस कितनी आसानी से फैलेगा। इसके फैलने को कम करने के लिए विभिन्न प्रतिबंधित उपायों में से एक लॉकडाउन लगाना शामिल है। इंपीरियल कॉलेज में डिपार्टमेंट ऑफ़ लाइफ साइंसेज के डॉ टॉम स्मिथ ने कहा कि हमारे नतीजे बताते हैं कि नीतिगत हस्तक्षेपों के मुकाबले तापमान में बदलाव का वायरस के फैलने पर बहुत कम असर पड़ता है। इसलिए जब लोग बिना टीकाकरण के रहते हैं, तो सरकारों को हस्तक्षेप करना नहीं छोड़ना चाहिए।

कोविड-19 के फैलने पर मौसम का असरः मौसमी बदलाव के चलते सार्स-सीओवी-2 फैलने का पूर्वानुमान लगाना बहुत कठिन होता है। उच्च तापमान को हवा में और सतहों पर अन्य कोरोनावायरस को निष्क्रिय करने के लिए भी जाना जाता है। शोध में कहा गया है कि कोरोनावायरस संक्रमण के फैलने के कारणों को जानने के लिए देशों के बीच तुलना करना मुश्किल है। जैसे कि ब्राजील, भारत और ईरान जैसे गर्मी के मौसम वाले देशों में भी कोरोना तेजी से फैलता है।

क्यों कीटों ने अपने पसंदीदा फूलों पर मंडराना बंद कर दिया ?

शोधकर्ताओं की एक टीम ने फूलों और परागणकर्ताओं के बीच रासायनिक संचार पर ओजोन वायु प्रदूषण के प्रभाव का अध्ययन किया है

वायु प्रदूषण न केवल लोगों के लिए घातक हो रहा है बल्कि परागणकर्ता भी इसकी चपेट में आ गए हैं। इसी को लेकर जर्मनी के मैक्स प्लैंक इंस्टीट्यूट फॉर केमिकल इकोलॉजी और अमेरिका के वर्जीनिया विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं की एक टीम ने फूलों और परागणकर्ताओं के बीच रासायनिक संचार पर ओजोन वायु प्रदूषण के प्रभाव का अध्ययन किया है। उन्होंने दिखाया कि तंबाकू के फूलों पर मंडराने वाले कीट ने अपने पसंदीदा फूलों की खुशबू की ओर आकर्षित होना बंद कर दिया है। क्योंकि खुशबू वायु प्रदूषण के प्रभाव से बदल गई थी।यह ऑक्सीकरण प्रदूषक इस प्रकार एक पौधे और उसके परागणकर्ता के बीच के संबंध में गड़बड़ी फैलाता है। प्रदूषण उस रिश्ते को जो लाखों वर्षों में विकसित हुआ है, उसमें बाधा डालता है। हालांकि जब मौका मिलता है, तो कीट (हॉक्मोथ्स) जल्दी सीखते हैं, एक अप्रिय प्रदूषित गंध वाले फूलों से भी पोषक रस चूस लते हैं। यह अध्ययन केमिकल इकोलॉजी जर्नल में प्रकाशित हुआ है।

परागण

परागण एक महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र सेवा है, जो मुख्य रूप से कीड़ों द्वारा किया जाता है। पौधे फूलों की गंध का उपयोग करके कीड़ों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं, जो कि एक रासायनिक संकेत हैं, यह परागणकर्ताओं के लिए एक सहज पसंद हो सकती है। यह सहजता फूलों और उनके परागणकर्ताओं के बीच सह-विकास संबंध का परिणाम है जो लाखों वर्षों में विकसित हुआ है।

लगभग 20 वर्षों से, वैज्ञानिक समुदाय में 'एन्थ्रोपोसीन' शब्द का उपयोग भूवैज्ञानिक युग का उल्लेख करने के लिए किया गया है। जिसमें मानव जैविक और वायुमंडलीय प्रक्रियाओं में कई बदलावों के लिए जिम्मेदार है। हालांकि कुछ समय पहले तक, पर्यावरण के प्राकृतिक गंधों पर एन्थ्रोपोजेनिक जलवायु परिवर्तन और वायुमंडलीय प्रदूषण के प्रभावों के बारे में बहुत कम जानकारी थी। इन गंधों की मदद से जीवों के बीच रासायनिक संचार होता है। मैक्स प्लैंक इंस्टीट्यूट फॉर केमिकल इकोलॉजी और वर्जीनिया वि-श्वविद्यालय के शोधकर्ताओं की एक टीम ने जांच की है कि मनुष्य द्वारा किया जाने वाला वायु प्रदूषण उनके पसंदीदा फूलों में से पराग कीट के आकर्षण को प्रभावित करता है या नहीं। ओजोन एक ऑक्सीडेंट है, जो एक अत्यधिक प्रतिक्रियाशील रसायन और प्रदूषक है जिसकी वजह से लोगों में श्वसन संबंधी बीमारियां होती हैं। अब ओजोन प्रदूषण को फूलों की गंध को बदलने के तौर पर देखा गया है। इस गंध को फूल अपने परागणकर्ताओं को आकर्षित करने के लिए उत्सर्जित करते हैं। अध्ययनकर्ता मार्कस नादेन कहते हैं अपने प्रयोगों के लिए, वैज्ञानिकों ने तंबाकू के कीट हॉकमॉथ, मांडुका सेक्स्टा का उपयोग किया। हॉकमॉथ, मंडुका सेक्स्टा हमारे अध्ययन के लिए एकदम सही मॉडल है। हालांकि यह फूल की गंध द्वारा अत्यधिक आकर्षित किया जाता है। यह फूलों का पता लगाने के लिए अपनी दृश्य प्रणाली का भी उपयोग करता है। फूल जो आमतौर पर कीट (हॉकमॉथ) को आकर्षित करते हैं वे अक्सर अपने मिश्रण में विशिष्ट यौगिकों को साझा करते हैं। शोध टीम ने सबसे पहले फूलों की गंधों की सटीक रचनाओं को निर्धारित किया। इसके लिए गैस की क्रोमैटोग्राफी का उपयोग करके ओजोन सामग्री को बिना बढ़ाए और हर गंध घटक के संबंधित सांद्रता को भी बढ़ाया नहीं गया। ओजोन प्रदूषण द्वारा बदली गई गंध के लिए, शोधकर्ताओं ने ओजोन सांद्रता का उपयोग किया, जिसे तंबाकू के प्राकृतिक उगने वाले स्थान पर, गर्म दिनों में मापा जा सकता है। उन्होंने एक हवा की सुरंग बनाकर पतंगों (हॉकमॉथ) की प्रतिक्रियाओं का परीक्षण किया, जिससे पतंग फूल की मूल गंध और ओजोन द्वारा बदली गई फूल की गंध दोनों की जांच कर सके। नादेन ने कहा कि हमने प्रयोगों के दौरान जो देखा उससे हम हैरान थे। तंबाकू के फूलों की गंध हमेशा आकर्षित करने वाली होती है वह अब पूरी तरह से बढ़े हुए ओजोन स्तरों की उपस्थिति में लुप्त हो गई थी।

तंबाकू के हॉकमॉथ सीखने में सक्षम हैं

यह सवाल उठ रहा था कि क्या वायु प्रदूषण के कारण अब पतंग (हॉकमॉथ) भूखा ही रहेगा, क्या यह कीटों को अपने भोजन के स्त्रोत को खोजने से रोक देगा। क्या कीड़े यह पता लगाने में सक्षम होंगे कि प्रदूषित फूल की भी रस दे सकते हैं? इस सवाल के जवाब देने के लिए, शोधकर्ताओं ने परीक्षण किया। क्या तंबाकू हॉकमॉथ्स अनाकर्षक गंध को स्वीकार करना सीख सकते हैं। शोधकर्ताओं ने कई अलग-अलग तरीकों का आकलन किया, जिसमें कीट ओजोन प्रदूषण के द्वारा बदले गए पुष्प की गंध के आधार पर फूलों को पहचानना सीख गए थे।

मंडुका सेक्स्टा की सीखने की क्षमता

वायु प्रदूषण अभी भी परागण और परागणकर्ताओं के लिए एक गंभीर खतरा पैदा करता है। प्रदूषित वातावरण में अपने मेजबान पौधों को पहचानने वाले कीटों के लिए सीखना महत्वपूर्ण हो सकता है, लेकिन हमारे अध्ययन से शेष प्रमुख प्रश्नों में से एक यह है कि क्या परागणकर्ता अपने फूलों के स्थान को ढूंढ पाएंगे। शुरू में जो गंध से पहचानते थे, अब प्रदूषित फूलों की गंध से पहचानना सीखेंगे। क्या अब परागणकर्ताओं के पास मेजबान फूलों को खोजने में मदद करने के लिए केवल दृश्य संकेत होंगे? एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि अन्य परागणकों के पास नई गंधों को सीखने के लिए समान सुविधा नहीं हो सकती है जो मंडुका सेक्स्टा के पास है।

वायु प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन के हमारे पारिस्थितिकी तंत्र के लिए दूरगामी परिणाम हैं। इनके बारे में अभी भी हमें बहुत कम जानकारी है। उदाहरण के लिए, हम अभी भी पौधों और कीटों के बीच रासायनिक संचार पर वायुमंडलीय परिवर्तनों के प्रभाव के बारे में बहुत कम जानते हैं। न केवल पौधों की गंध को बदल दिया जाता है, बल्कि नर को आकर्षित करने के लिए सेक्स फेरोमोन मादा कीट का भी उपयोग किया जाता है। वायुमंडलीय परिवर्तनों से फेरोमोन में परिवर्तन होने की संभावना है जो प्रजनन विफलता का कारण बन सकता है। हाल के वर्षों में कीट मृत्यु दर नाटकीय रूप से बढ़ी है और दुनिया भर के शोधकर्ता कारणों की खोज कर रहे हैं।

डीटीई से साभार

लॉकडाउन से ओजोन प्रदूषण में आयी 2 प्रतिशत की कमी

ललित मौर्य

ओजोन प्रदूषण में आई यह गिरावट इतनी है जिसे यदि नियमों और नीतियों की मदद से कम करने की कोशिश की जाती तो इसमें करीब 15 वर्षों का समय लगता

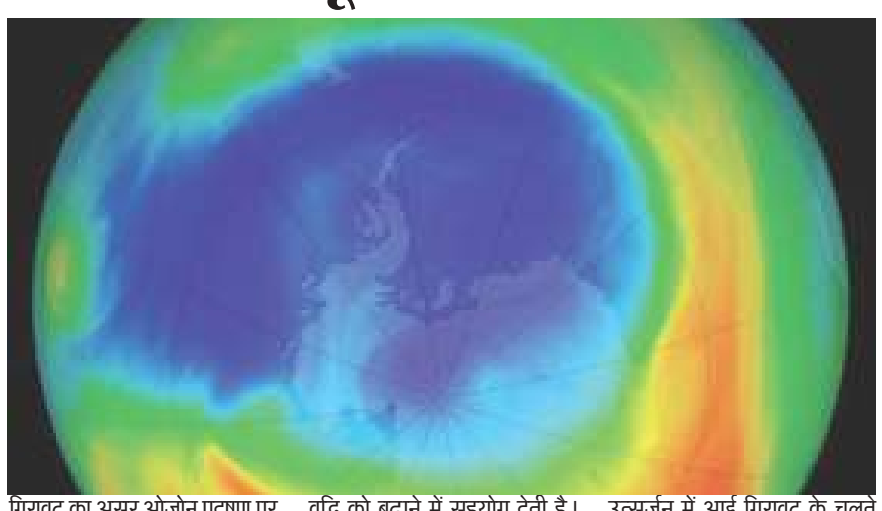

हाल ही में नासा द्वारा किए एक अध्ययन से पता चला है कि लॉकडाउन के कारण वैश्विक ओजोन प्रदूषण में 2 फीसदी की गिरावट दर्ज की गई थी मई और जून 2020 के दौरान वैश्विक स्तर पर क्षोभमंडल में मौजूद कुल ओजोन में आई यह गिरावट करीब 6 टीजीओ3 थी जिसकी सबसे बड़ी वजह एशिया और अमेरिका में उत्सर्जन में आई कमी थी विशेषज्ञों के अनुसार ओजोन प्रदूषण में आई यह गिरावट इतनी है, जिसे यदि नियमों और नीतियों की मदद से कम करने की कोशिश की जाती तो इसमें करीब 15 साल का समय लगता।

कोविड-19 ने पूरी दुनिया पर असर डाला है इस महामारी के कारण 2020 की शुरुवात में वैश्विक स्तर पर व्यापार की गति धीमी हो गई थी जिसका असर नाइट्रोजन ऑक्साइड के उत्सर्जन पर भी पड़ा थो नासा का अनुमान है कि इसके कारण वैश्विक स्तर पर इसमें करीब 15 फीसदी की कमी आई थी जबकि स्थानीय स्तर पर इसमें आई गिरावट को 50 फीसदी तक दर्ज किया गया था। नाइट्रोजन ऑक्साइड हमारे स्वास्थ्य और जलवायु के लिए बड़ा खतरा है यह गैस वातावरण में प्रतिक्रिया करके ओजोन बनाती है नाइट्रोजन ऑक्साइड के उत्सर्जन में आई गिरावट का असर ओजोन प्रदूषण पर भी पड़ा था, जिसके कारण उसके स्तर में भी गिरावट आ गई थी। ओजोन हमारे लिए बड़ी अलग तरह से काम करती है। जब यह ऊंचाई पर समताप मंडल में होती है तो यह हमें सूर्य के विनाशकारी विकिरण से बचाती है वहीं जब यह सतह के नजदीक होती है तो यह स्वास्थ्य को प्रभावित करती है 2019 में सतह पर मौजूद ओजोन प्रदूषण के कारण दुनिया भर में 365,000 लोगों की मौत का अनुमान लगाया गया थो जिसका सबसे ज्यादा असर छोटे बच्चों, अस्थमा के मरीजों के फेफड़ों को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचा था। यह गैस पौधों के श्वसन तंत्र को भी नुकसान पहुंचाती है इससे उनके प्रकाश संश्लेषण की क्षमता पर भी असर पड़ता है जिससे उनकी वृद्धि और फसलों की पैदावार गिर जाती है वहीं जब यह गैस क्षोभमंडल के शीर्ष पर होती है तो यह एक शक्तिशाली ग्रीनहॉउस गैस होती है जो वैश्विक तापमान में होने वाली वृद्धि को बढ़ाने में सहयोग देती है। शोध के अनुसार जिस देश में जितना सख्त लॉकडाउन था वहां उत्सर्जन में उतनी ही ज्यादा गिरावट दर्ज की गई है उदाहरण के लिए फरवरी 2020 की शुरुआत से चीन में लगाए लॉकडाउन के कारण कुछ हफ्तों में ही कुछ शहरों के नाइट्रोजन ऑक्साइड उत्सर्जन में 50 फीसदी की गिरावट आ गई था। वहीं बसंत में अमेरिकी राज्यों में इसके उत्सर्जन में 25 फीसदी की कमी आ गई थी।

सतह से 10 किलोमीटर की ऊंचाई पर भी दर्ज की गई ओजोन में गिरावट

इस शोध से जुड़ी शोधकर्ता जेसिका न्यू जोकि जेपीएल में वैज्ञानिक भी हैं, ने बताया कि वो वैश्विक ओजोन पर पड़ने वाले इसके प्रभाव को देख कर आश्चर्यचकित थी कि यह प्रभाव कितना बड़ा थो उन्हें ज्यादा उम्मीद थी कि इसका असर स्थानीय पैमाने पर सतह के पास देखने को मिलेगा। लेकिन नाइट्रोजन ऑक्साइड के उत्सर्जन में आई गिरावट के चलते दुनिया भर में सतह से करीब 10 किलोमीटर की ऊंचाई पर भी ओजोन में कमी देखने को मिली थी।

गौरतलब है कि नाइट्रोजन ऑक्साइड को ओजोन में बदलने वाली प्रतिक्रियाओं के लिए सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता होती है इसके साथ ही यह कई अन्य कारकों जैसे कि मौसम और हवा में अन्य केमिकलों पर भी निर्भर करता है यह सभी कारक इतने तरीकों से परस्पर प्रतिक्रिया करते हैं कि कुछ परिस्थितियों में नाइट्रोजन ऑक्साइड के उत्सर्जन में कमी आने के बावजूद ओजोन में वृद्धि होने लगती है। यही वजह है कि शोधकर्ता केवल नाइट्रोजन ऑक्साइड से जुड़े आंकड़ों के आधार पर ओजोन के बढ़ने या घटने की भविष्यवाणी नहीं कर सकते हैं। इसके लिए उन्हें इस तरह के विस्तृत विश्लेषण की आवश्यकता पड़ती है। इस शोध में शोधकर्ताओं ने नाइट्रोजन ऑक्साइड, ओजोन और अन्य वायुमंडलीय गैसों को मापने के लिए नासा और यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी, ईएसए के पांच उपग्रहों की मदद ली है। इनके विश्लेषण के लिए नासा की जेट प्रोपल्शन लेबोरेटरी में आंकड़ों के विश्लेषण के लिए विकसित प्रणाली का उपयोग किया है। इससे उन्हें लॉकडाउन के दौरान और उसके बाद में उत्सर्जन में आने वाली कमी और वृद्धि का पता चला है।

हालांकि यह शोध वैश्विक स्तर पर ओजोन प्रदूषण में गिरावट की बात कहता है पर सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरमेंट (सीएसई) द्वारा जारी एक रिपोर्ट से पता चला है कि 1 जनवरी से 31 मई 2020 के बीच भारत के 22 बड़े शहरों में ओजोन प्रदूषण का स्तर मानक से अधिक था। आंकड़ों के विश्लेषण से ये बात सामने आई है कि जब लॉकडाउन के कारण शहरों में पार्टिकुलेट मैटर 2.5 और नाइट्रोजन डाई-आक्साइड का स्तर जब काफी कम हो गया था, तब देश के कई शहरों में ओजोन प्रदूषण चिंताजनक स्तर पर पहुंच गया था।

नासा द्वारा किए अध्ययन से संकेत मिले हैं कि एक बार जैसी ही वैश्विक अर्थव्यवस्था में सुधार आएगा, उससे नाइट्रोजन ऑक्साइड के उत्सर्जन और ओजोन के स्तर में फिर से वृद्धि हो जाएगी ऐसे में जर्नल साइंस एडवांसेज में छपे इस शोध के मुताबिक यदि स्थानीय स्तर पर नाइट्रोजन ऑक्साइड के स्तर को कम करने के लिए नई तकनीकों और अन्य समाधानों को अपनाया जाए तो उनकी मदद से वैश्विक स्तर पर वायु की गुणवत्ता और जलवायु में सुधार किया जा सकता है।

बाल मजदूरी करने को मजबूर है दुनिया का हर दसवां बच्चा

आईएलओ के मुताबिक, लगभग 7.9 करोड़ बच्चे ऐसे जोखिम भरे काम कर रहे हैं, जो उनकी सेहत के लिए खतरनाक है। दुनिया का हर दसवां बच्चा मजदूरी करने को मजबूर है। जो न केवल उनके आज बल्कि उनके भविष्य को भी बर्बाद कर रहा है। यह आंकड़ा करीब 16 करोड़ है। इनमें से करीब 39.4 फीसदी (6.3 करोड़) बच्चियां और 60.6 फीसदी (9.7 करोड़) बच्चे हैं। यह जानकारी हाल ही में इंटरनेशनल लेबर आर्गेनाईजेशन (आईएलओ) और यूनिसेफ द्वारा जारी रिपोर्ट में सामने आई है। हालांकि इन आंकड़ों को देखें तो बच्चियों की तुलना में कहीं अधिक बच्चे बाल मजदूरी कर रहे हैं पर यदि इसमें बच्चियों द्वारा हर सप्ताह घर के कामों में लगाए 21 घंटों को और जोड़ दिया जाए तो अंतर काफी हद तक बराबर हो जाता है। समस्या सिर्फ इतनी ही नहीं है इनमें से करीब आधे बच्चे मतलब 7.9 करोड़ बच्चे ऐसे कार्यों में संलग्न हैं, जो उनके स्वास्थ्य को दिन-प्रतिदिन बर्बाद कर रहा है। ऐसे जोखिम भरे कामों के कारण उनके न केवल शारीरिक बल्कि मानसिक स्वास्थ्य पर भी असर पड़ रहा है ऐसा नहीं है कि बाल मजदूरी को खत्म करने की दिशा में कोई प्रगति नहीं हुई थी। 2000 से इसमें लगातार कमी आ रही थी। पर पिछले 20 वर्षों में यह पहला मौका है जब बाल मजदूरों की संख्या में इजाफा हुआ है। आंकड़ों के मुताबिक 2000 में करीब 24.6 करोड़ बच्चे बाल मजदूरी कर रहे थे। जिसमें से 17 करोड़ से ज्यादा बच्चे जोखिम भरे कामों में लगे हुए थे।

कार्बन डाइ ऑक्साइड अपने रिकार्ड स्तर पर

पिछले 40 लाख वर्षों में यह पहला मौका है जब किसी महीने में कार्बन डाइऑक्साइड का औसत स्तर अपने रिकॉर्ड पर पहुंच गया है। नेशनल ओशनिक एंड एटमॉस्फेरिक एडमिनिस्ट्रेशन (एनओएए) द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार मई 2021 में कार्बन डाइऑक्साइड का स्तर 419.13 पीपीएम पर पहुंच गया है, जोकि एक नया रिकॉर्ड है। इससे पहले मार्च 2021 में यह 417.64 पार्टस प्रति मिलियन (पीपीएम) रिकॉर्ड किया गया था। वहीं मई 2020 में वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड का स्तर 417.64 पीपीएम रिकॉर्ड किया गया था। यह तब है जब लॉकडाउन के कारण वैश्विक स्तर पर आई आर्थिक मंदी के चलते कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन में 7 फीसदी की कमी दर्ज की गई थी। वैज्ञानिकों ने इसकी तुलना 41 से 45 लाख वर्ष प्लियोसीन युग पूर्व वातावरण में मौजूद कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर से की है जब उसका स्तर 400 पीपीएम या उससे ज्यादा था।

जंगल कटने से बढ़ जाता है पानी का बहाव

दयानिधि

जंगल के प्राकृतिक जलाशयों के साल भर में बहने की गति या प्रवाह को वन 0.7 से 65.1 फीसदी तक कम कर सकते हैं।

यूनिवर्सिटी ऑफ़ ब्रिटिश कोलंबिया ओकानगन कैंपस के नए शोध से पता चलता है कि वन और जल आपूर्ति के बीच सही तालमेल से दोनों के बीच के संबंधों को बेहतर तरीके से समझा जा सकता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि स्वस्थ, बढ़ते जंगल, लगातार जल आपूर्ति करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

जंगल प्राकृतिक जलाशयों को व्यवस्थित करने में अहम भूमिका निभाते हैं, जल विज्ञान (हाइड्रोलॉजिकल) प्रक्रियाओं की मदद से ये पानी को साफ करते हैं तथा इसके बहाव को कम करते है जिससे धरती का कटाव धीमा होता है, जो कि सबसे मूल्यवान पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं में से एक है। लेकिन मानव गतिविधि के कारण जंगलों में बदलाव आ रहा है और इनके परस्पर हाइड्रोलॉजिकल प्रक्रियाओं से जंगलों पर प्रभाव पड़ रहा है।

डॉ. वेई, फ़ॉरेस्ट रेनवाल बीसी की वाटरशेड रिसर्च एंड मैनेजमेंट के अध्यक्ष की अगुवाई में यह शोध किया गया है। उन्होंने कहा कि वनों की कटाई, कृषि और शहरीकरण जैसी गतिविधियां दुनिया भर में जंगलों को बदल रही हैं, जिससे पानी की कमी, बहाव की गति बढ़ रही है।डॉ. वेई कहते है कि यह धारणा है कि मनुष्य ने प्रकृति के साथ भारी छेड़छाड़ की है, जिसके अक्सर प्राकृतिक दुनिया पर बुरे प्रभाव पड़ते हैं। यही कारण है कि इन घटनाओं का वर्णन करने के लिए एंथ्रोपोसीन शब्द बनाया गया था। लेकिन अब हमें यह स्वीकार करने की आवश्यकता है कि हम कहां पर गलत हैं और इस समस्या से किस तरह निपटा जा सकता है।

प्राकृतिक गड़बड़ियां जैसे कीटों के कारण बीमारियों का फैलना और जंगल की आग जैसी घटनाएं भी जंगलों के तेजी से बदलाव में अहम योगदान दे रही है। डॉ. वेई ने वर्तमान में वन-जल अनुसंधान और प्रबंधन करने के तरीकों की जांच की है। उनका लक्ष्य कमियों की पहचान कर एक नए दृष्टिकोण के बारे में जानकारी देना है। जिसमें कई तरह के बदलने वाली चीजें और उनके परस्पर प्रभाव हो सकते है, इन सबको समझने के बाद किसी भी वाटरशेड को व्यवस्थित किया जा सकता है।

इस अध्ययन में उन्होंने एक नए परिप्रेक्ष्य की ओर इशारा किया है। उन्होंने कहा कि हम साल भर में बहने वाले पानी की मात्रा और गति पर वनों की कटाई से होने वाले प्रभावों को देख रहे हैं और हमने पाया कि वनों की कटाई ने पानी की बहने की गति को बढ़ाया है। हांलाकि, अध्ययन में बड़ी भिन्नताएं देखी गई जिसमें 1 प्रतिशत वनों की कमी के बीच पानी का बहाव की गति लगभग 600 प्रतिशत तक बढ़ गई थी। अध्ययन में भिन्नताएं क्यों थी, इस बारे में बताते हुए उन्होंने कहा कि हमने निष्कर्ष निकाला कि जब जंगलों के नुकसान के कारण मिट्टी और पौधों से पानी वाष्पित हो जाता है, तब यह अंतर आता है।

लेकिन नुकसान की मात्रा 2 प्रतिशत से 100 प्रतिशत तक कम थी, यह एक बहुत बड़ा अंतर है जिसे वन गड़बड़ी के पैमाने, प्रकार और गंभीरता के साथ-साथ जलवायु और जलक्षेत्र के गुणों के स्थान के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। जंगल के प्राकृतिक जलाशयों के साल भर में बहने की गति या प्रवाह को वन 0.7 से 65.1 फीसदी तक कम कर सकते हैं। बहुत सारे बदलने वाली चीजें हैं जिन्हें ध्यान में रखा जाना चाहिए और ऐसा नहीं करने पर शोध के निष्कर्ष गलत हो सकते हैं। असमानताओं को सीमित करने के लिए डॉ. वेई कहते हैं कि भविष्य के शोध और वाटरशेड प्रबंधन दृष्टिकोण को व्यवस्थित करने की आवश्यकता है, जिसमें प्रमुख योगदान करने वाले और हाइड्रोलॉजिकल सेव-ाओं से संबंधित बदलने वाली चीजें शामिल है। वाटरशेड प्रबंधन के लिए उनका यह भी सुझाव है कि मशीन लर्निंग और क्लाइमेट इको-हाइड्रोलॉजिकल मॉडलिंग जैसे नए साधनों का उपयोग किया जाना चाहिए। डॉ. वेई कहते हैं सभी वन-जल शोधों के लिए एक व्यवस्थित दृष्टिकोण को लागू करने से गलत मूल्यांकन की संभावना कम हो जाएगी, जो हमें समस्याओं को हल करने का बेहतर मौका देगी।

उत्तर प्रदेश में होने लगा झींगा पालन, मिल सकता है स्थानीय लोगों को रोजगार

उत्तर प्रदेश के मथुरा और हाथरस जिले में खारे पानी में झींगा पालन को बड़े पैमाने पर प्रोत्साहित किया जा रहा है। खारे पानी के प्रति सहनशीलता की वजह से इन जिलों में सफेद पैर वाले झींगा पालन का व्यवसाय फल-फूल रहा है।

उत्तर भारत में झींगा-पालन में सफलता मिलने से बड़ा बदलाव आ सकता है। खासकर इस क्षेत्र के किसानों के लिए। बंजर भूमि में खारे पानी के जलजमाव वाले क्षेत्र में अगर झींगा-पालन होने लगे तो यहां के स्थानीय लोगों को लंबी-अवधि के लिए रोजगार की सुरक्षा मिल सकती है। कुछ सालों पहले, उत्तर प्रदेश के हाथरस जिले के रहने वाले कमल कुमार केशवानी ने सरकारी परियोजना के तहत झींगा-पालन की शुरुआत की थी। ऐसे जीव का पालन जो मूलतः खारे पानी में रहना पसंद करता है। लेकिन उत्तर प्रदेश के कुछ जिलों में इसके पालन से ना केवल स्थानीय लोगों को रोजगार मिलने की संभावना बढ़ी है बल्कि देश के मत्स्य-निर्यात में भी विस्तार की संभावना बढ़ी है। झींगा-पालन से केशवानी इतने प्रभावित हैं कि वह भी इसको और विस्तार देने की सोच रहे हैं। वर्तमान में वह करीब 7.9 एकड़ क्षेत्र में झींगा-पालन करते हैं।

इतना ही नहीं, इनका झींगा पालन, अन्य किसानों के लिए मॉडल का काम भी करने लगा है। आस-पास के गांव के लोग जो इसमे रुचि रखते हैं, यहां से बीज से लेकर झींगा-पालन से जुड़े जरूरी सलाह-मशवरे में मदद ले सकते हैं। स्थानीय प्रशासन की मदद से केशवानी उन्हें बीज, चारा, परामर्श और सबसे महत्वपूर्ण, बाजार में उत्पाद ले जाने की सुविधाएं उपलब्ध कराते हैं। ''उत्तर भारत में झींगा-पालन की सफलता किसानों के लिए गेम-चेंजर साबित हो सकती है। इसके अनेक लाभ हैं। खारे बंजर भूमि पर झींगा की खेती में स्थानीय लोगों को रोजगार मिलने की अपार संभावनाएं हैं।

बीएयू ने किसानों को दी उन्नत तकनीकी से धान की खेती शुरू करने की सलाह

डॉ. कृष्णा प्रसाद

रांची : बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के ग्रामीण कृषि मौसम सेवा ने झारखण्ड राज्य के किसानों के लिए चालू खरीफ मौसम खेती परामर्श बुलेटिन जारी की है। राज्य में खरीफ की बहुतायत खेती मॉनसून की वर्षा पर निर्भर करती है। कृषि योग्य कुल 38 लाख हेक्टेयर भूमि में से मात्र करीब 28 लाख हेक्टेयर भूमि में ही खरीफ फसलों की खेती हो पाती है। इनमें करीब 18 लाख हेक्टेयर भूमि मात्र में धान की खेती होती है। भारत मौसम विभाग के मुताबिक मौनसूनी वर्षा 15 जून से होने की संभावना है। मौसम वैज्ञानिक इस वर्ष सामान्य वर्षा होने की संभावना जता रहे है। ऐसे में बीएयू के धान विशेषज्ञ डॉ. कृष्णा प्रसाद ने किसानों को ऊपरी (टांड़) में 100 दिनों से कम अवधि वाली, मध्यम जमीन में 100 -125 दिनों वाली एवं नीची भूमि में 125 से अधिक अवधि वाली धान किस्मों के चयन को प्राथमिकता देने की बात कही है।

बुआई से पहले धान बीज को उपचारित करना जरूरी है। बीज के पूरी तरह डूबने लायक पानी में 1 ग्राम ट्रायसाक्लाजोल (बीम) एवं 1 ग्राम मानकोजेंब दवा का घोल बना लें। इस घोल में कुछ घंटे तक बीज को छोड़ दें और फिर घोल से बीज निकालकर बुआई करें। खरपतवार नियंत्रण के लिए बुआई के 2-3 दिनों बाद खरपतवारनाशी ब्बुटाक्लोर 50 ईसी, 800 मिलीलीटर प्रति एकड़ की दर से 300-400 लीटर पानी में घोलकर स्प्रयेर से छिड़काव अवश्य करनी चाहिए।

कुलपति डॉ.ओंकार नाथ सिंह ने बताया कि झारखण्ड के करीब 28 लाख हेक्टेयर भूमि में खरीफ फसलों की खेती होती है। इनमें करीब 18 लाख हेक्टेयर में प्रमुख फसल धान की खेती होती है। धान की अच्छी पैदावार के लिए मध्यम (दोन -2) एवं नीची भूमि (दोन - 1) भूमि में ही धान लगायें। अनुशंषित उन्नत या संकर किस्मों के स्वस्थ्य बीज का उपयोग तथा बीजोपचार के बाद ही बुआई करें।

धान पौधशाला की तैयारी

मध्यम (दोन -2) एवं निचली भूमि (दोन - 1) में रोपाई हेतु बिचड़े के लिए धान पौधशाला बीजस्थली की तैयारी साप्ताहिक अंतराल पर 3-4 किस्तों करनी चाहिए. बीजस्थली हेतु 16-20 कि. ग्रा. प्रति एक-ड़ उन्नतशील किस्म तथा संकर किस्म बीज 6 कि. ग्रा. प्रति एकड़ तथा जो श्रीविधि से धान की खेती करना चाहते हो, 2 कि. ग्रा. प्रति एकड़ बीज का उपयोग की जा सकती है. 2.5 डिसमिल (100 वर्ग मीटर) भूमि क्षेत्रफल की बीजस्थली में क्यारियों में एक किलो नेत्रजन, एक किलो स्फूर तथा एक किलो पोटाश का प्रयोग तथा बीजस्थली में बीज गिराने के 15-20 दिनों बाद एक किलो नेत्रजन से बिचड़ों का टॉप ड्रेसिंग की जा सकती है.

नीची भूमि (दोन - 1) में धान की खेती

रोपाई के लिए 130-135 दिनों वाली किस्मों में बिरसामति (सुगंधित), बीआर 9, बीआर 10 (सुगंधित), एमटीयू 1001 तथा लंबी अवधि वाली धान किस्मों (140-145 दिनों) में राज श्री, स्वर्णा (एमटीयू 7029), सम्भा महसूरी (बीपीटी 5204), एराइज 6444 (गोल्ड) एवं उन्नत सम्भा महसूरी किस्मों का चयन की जा सकती है. एक एकड़ हेतु 16 कि. ग्रा. बीज एवं संकर किस्म में 6 कि. ग्रा. बीज प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है. स्वर्णा, सम्भा महसूरी एवं उन्नत सम्भा महसूरी किस्मों की रोपाई 1 से 25 जुलाई तक अवश्य कर देनी चाहिए. एराइज 6444 गोल्ड (हाईब्रिड) की रोपाई 1 से 25 जुलाई तक अवश्य कर देनी चाहिए।

ऊपरी (टांड़) भूमि में धान की खेती

15 से 30 जून तक धान की सीधी बुआई की जा सकती है. बुआई पूर्व 2 टन प्रति एकड़ सड़ी गोबर खाद या कम्पोस्ट खेतों में बिखेरकर जुताई तथा दीमक से बचाव के लिए नीम या करंज की खल्ली 100 किलो प्रति एकड़ व्यवहार किया जा सकता है. ऊपरी (टांड़) भूमि में छिटकवाँ विधि से धान की सीधी बुआई के लिए उपयुक्त उन्नत किस्मों में अंजलि, बिरसा विकास झ 111, बिरसा धान झ 108, बिरसा विकास धान झ 109, बिरसा विकास धान झ 110 तथा वंदना का उपयोग किया जा सकता है. छिटकवाँ विधि में 40 किलो तथा हल के पीछे बुआई में 30 किलो प्रति एकड़ बीज की आवश्यकता होती है.

मध्यम (दोन -2) भूमि में धान की खेती

समय पर रोपाई हेतु 110 से 125 दिनों वाली धान किस्मों में आईआर 36, आईआर 64, आईआर 64, ललाट, नवीन, बिरसा विकास धान-203, बिरसा सुगंध-1, एवं शुष्क रोधी किस्म सहभागी धान एवं आईआर 64 (ड्राँट-1) लगाएँ. देर से रोपाई में बिरसा सुगंध-1, एमटीयू 1010, पीएसी 801 एवं पीएसी 807 को लगाया जा सकता है. संकर किस्मों में एराइज तेज गोल्ड, पीएसी 801 एवं पीएसी 807 तथा अन्य कम अवधि वाली धान किस्मों का चयन किया जा सकता है. एक एकड़ हेतु 16 से 20 कि. ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है।

सीसीएल मुख्यालय में रांची में 600 कर्मियों सहित आम लोगों ने लिया कोरोना वैक्सीन

संवाददाता रांची :सीसीएल दरभंगा हाउस, रांची स्थित 'डिस्पेंसरी' में दो दिवसीय10जून एवं 11 जून को टीकाकरण कैम्प का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया, जिसमें 18 एवं 45 वर्ष की आयु से ऊपर के सीसीएल कर्मियों एवं उनके परिवार सहित आमजनको भी वैक्सीन लगाया गया। इस टीकाकरण केन्द्र में को-वैक्सीन एवं कोविशील्ड का व्यवस्था किया गया था।

सीसीएल दरभंगा हाउस, रांची में सोशल डिस्टेंशिंग का पालन करते हुये 350 कर्मियोंसहित आमजन को टीकाकरण किया गया जिसमें 45 वर्ष की आयुसे उपर के 200 व्यक्तियों को को-वैक्सीन का दूसरा डोज दिया गया तथा 18 वर्ष की आयु से ऊपर 100 व्यक्तियों को कोविशिल्-ड का पहला डोज दिया गया। इसी तरह विगत 10 जून, 2021 को भी दोनो आयु वर्ग 18 एवं 45 वर्ष की आयु से ऊपर के 250 व्यक्तियों का टीकाकरण किया गया।

सीसीएल के सीएमडी पी.एम. प्रसाद ने पुनः सीसीएल कर्मियों सहित स्टेकहोल्डर्स व आमजन से अपील किया है कि कोविड टीकाकरण अभियान को सफल बनाने के लिए स्वयं व परिवार में 18 वर्ष एवं उससे उपर के आयुवर्ग के सदस्यों को जल्द से जल्द से टीका लगवायें ताकि इस महामारी से बचा जा सके। सीसीएल राज्य सरकार के सहयोग से अधिक से अधिक संख्या में सीसीएल परिवार सहित आमजन को ट-ीका लगवाने में प्रयासरत है।वैक्सीनेशन में सीसीएल सीएमएस, प्रभारी, डॉ. डी.के.एल.चौहान, डॉ आर.के. जैन डॉ. आर.के. सिंह, डॉ. आर.के. जायसवाल, डॉ अरविन्द कुमार,आमोद, नर्स सनार्थी, सुनिता, कंचन, श्वेता एवं अन्य पारा मेडिकल स्टाफ का सक्रिय योगदान रहा।

रेलवे सुरक्षा बलों ने रांची में 64 केन बीयर जप्त किया

संवाददाता रांची : 08 जून को सायं सात बजे रेलवे सुरक्षा बल चौकी हटिया एवं अपराध निरोधी एवं खोजी दस्ता,रांची के संयुक्त रुप से हटिया रेलवे स्टेशन पर ट्रेन संख्या 08624 के निरीक्षण के दौरान कोच संख्या र-1 में दो संदिग्ध व्यक्तियों के पास से 64 केन बीयर जब्त किया गया। इस सम्बन्ध में राजकीय रेल थाना, हटिया ने उत्पाद अधिनियम के अन्तर्गत दोनों आरोपियों के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया। पूछताछ करने पर दोनों ने अपना नाम, रणजीत कुमार यादव, राघोपुर, जिला - वैशाली(बिहार) तथा विनोद भगतकटहल कोचा, बिरसा चौक, हटिया, रांची, का निवासी बताया।

एएनएम और सहिया दीदी के बीच ऑक्सिमीटर वितरण किया गया

रांची/बुंडूःउद्योगिनी(UDYOGINI) संस्था के द्वारा प्रखण्ड में कोरोना महामारी को लेकर जागरूकता और टीकाकरण को बढ़ावा देने के लिए कार्यक्रम चलाया गया । कार्यक्रम में संस्था की तरफ से एएनएम और सहिया दीदी को ऑक्सिमीटर प्रदान किया गया, जिससे वे लोग अपने क्षेत्र में लोगों का जांच कर ज्यादा से ज्यादा लाभ दिला सकें। मौके परप्रखण्ड विकास पदाधिकारी, नरेंद्र कुमार उपस्थित रहे। कार्यक्रम को सफल बनाने में बीपीओ संजय कुमार साहू तथा संस्था प्रतिनिधि अमित कुमार, पायल, सौम्या और सुवर्धन का सराहनीय योगदान रहा।

कृषि और सेवा क्षेत्र में हैं सबसे ज्यादा बाल मजदूर

एजेंसियां :70 फीसदी से ज्यादा बाल मजदूर कृषि में लगे हुए हैं जिनकी कुल संख्या करीब 11.2 करोड़ है। वहीं 19.7 फीसदी बच्चे सेवा क्षेत्र में और पांच से 17 वर्ष की उम्र के 10.3 फीसदी बाल मजदूर कारखानों, खानों और अन्य उद्योगों में लगे हुए हैं। वहीं एक रिपोर्ट के अनुसार कोविड-19 के कारण आया आर्थिक संकट 2022 तक और 89 लाख बच्चों को बाल मजदूरी के दलदल में धकेल देगा, जिससे उनका भविष्य अंधकारमय हो सकता है। यही नहीं अनुमान है की बाल मजदू-रों का यह आंकड़ा 2022 तक बढ़कर 20.6 करोड़ तक जा सकता है।

बाल मजदूरों की संख्या में सबसे ज्यादा वृद्धि उप-सहारा अफ्रीका में देखी गई है, जहां बढ़ती आबादी, गरीबी और आर्थिक संकट और सामाजिक सुरक्षा के आभाव के चलते 2016 से 2020 तक और 1.6 करोड़ बच्चे बाल मजदूरी करने को मजबूर हो गए हैं। उप-सहारा अफ्रीका में पांच से 17 वर्ष की उम्र के लगभग एक चौथाई बच्चे पहले से ही बाल मजदूरी कर रहे हैं। वहीं यूरोप में 5.7 फीसदी, दक्षिण एशिया में 4.9 फीसदी और उत्तरी अमेरिका में यह आंकड़ा 0.3 फीसदी है। इसी तरह बाल मजदूरी में शहरी-ग्रामीण असमानता भी साफ देखी जा सकती है। जहां ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले करीब 13.9 फीसदी बच्चे बाल मजदूरी कर रहे हैं वहीं शहरी क्षेत्र में यह आंकड़ा 4.7 फीसदी है।

यूनिसेफ ने कोरोना से निपटने के लिये चिकित्सीय उपकरण मुख्यमंत्री को सौंपे

झारखंड यूनिसेफ ने राज्य सरकार को सौंपा 800 ऑक्सीजन कंसंट्रेटर्स और 20 लाख थ्री लेयर सर्जिकल मास्क

संवाददाता रांची : झारखंड यूनिसेफ के प्रमुख प्रशांत दास एवं अन्य पदाधिकारियों ने मुख्यमंत्री से मुलाकात की और कोरोना महामारी से लड़ने के निमित्त कई महत्वपूर्ण चिकित्सा उपकरण मुख्यमंत्री को सौंपे। मौके पर मुख्यमंत्री ने कहा कि राज्य सरकार द्वारा कोरोना संक्रमण की रोकथाम, बचाव और संक्रमित मरीजों के बेहतर इलाज के लिए लगातार प्रयास किए जा रहे हैं। राज्य सरकार ने कोरोना संक्रमण की संभावित तीसरी लहर के मद्देनजर अपनी तैयारियां शुरू कर दी हैं। इस दौर में यूनिसेफ द्वारा राज्य सरकार को आवश्यक चिकित्सा सामग्री आपूर्ति करना सराहनीय कार्य है। मुख्यमंत्री ने कहा कि राज्य के विकास में यूनिसेफ सहित कई विभिन्न संस्थानों द्वारा सराहनीय कदम उठाए जा रहे हैं। मुझे विश्वास है कि झारखंड यूनिसेफ द्वारा दिए गए आवश्यक सामग्रियों से राज्य के जरूरतमंद लोगों को चिकित्सा सहायता मुहैया कराने तथा कोविड-19 के खिलाफ जारी लड़ाई को जीतने में मदद मिलेगी। संक्रमित मरीजों के जीवन बचाने के लिए यूनिसेफ के द्वारा किया जा रहा यह प्रयास और सहयोग प्रशंसनीय है। मुख्यमंत्री ने कहा कि मैं यूनिसेफ की पूरी टीम को धन्यवाद देता हूं। मुख्यमंत्री ने कहा कि हमसभी लोग मिलकर कोरोना से जंग में जीतेंगे।

यूनिसेफ के प्रमुख प्रशांत दास ने कहा कि कोविड-19 के हालात से नियंत्रण हेतु झारखंड यूनिसेफ द्वारा राज्य सरकार को ऑक्सीजन कंसंट्रेटर प्रदान किया जा रहा है। उन्होंने कहा कि राज्य में कोरोना संक्रमण के प्रसार को कम करने तथा बेहतर प्रबंधन के लिए यूनिसेफ द्वारा कोल्ड चेन उपकरण, आरटीपीसीआर मशीन और मास्क भी राज्य सरकार को उपलब्ध कराया जा रहा है। यूनिसेफ के पदाधिकारियों ने 3 आरटीपीसीआर मशीन ,20 लाख थ्री लेयर सर्जिकल मास्क, 800 ऑक्सीजन कंसंट्रेटर्स, 2 वाकिंग कूलर, 1 वाकिंग फ्रीजर, 90 आइसलाइन रेफ्रिजरेटर, 27 डीपफ्रीजर, 511 लार्ज कोल्ड चेन बॉक्स इत्यादि इक्विपमेंट्स कोरोना महामारी से निजात पाने के निमित्त राज्य सरकार को सौंपा। मौके पर विकास आयुक्त सह अपर मुख्य सचिव स्वास्थ्य विभाग अरुण कुमार सिंह, मुख्यमंत्री के सचिव विनय कुमार चौबे, मुख्यमंत्री के प्रेस सलाहकार अभिषेक प्रसाद सहित झारखंड यूनिसेफ के अन्य पदाधिकारी उपस्थित थे।

झारखंड के गावों में भी टीका लेने आने लगे लोग

- *अच्छे जनसंपर्क से लोगों में टीके को लेकर भ्रांतियां दूर हुयी*
- *झारखण्ड के सुदूरवर्ती गांवों में टीकाकरण अभियान को मिल रही सफलता*
- *नक्सल प्रभावित गांवों के ग्रामीण भी टीकाकरण के प्रति हो रहे सजग*

रांचीः कोविड 19 के टीकाकरण को लेकर राज्य सरकार का जागरूकता अभियान रंग पकड़ने लगा है। गांव में जाकर उनकी ही भाषा, बोली में टीकाकरण के महत्व को समझाने से भ्रम और अफवाहों का असर खत्म होने लगा है। लोग खुद टीकाकरण अभियान में बढ़-चढ़कर भागीदारी निभाने लगे हैं। यही कारण है कि कुछ गांवों को शत-प्रतिशत टीकाकरण का तगमा मिल चुका है। ऐसा ही एक गांव है, बनमारा। यह झारखण्ड और छत्तीसगढ़ की सीमा पर स्थित सिमडेगा जिले के कुल्लू केरा पंचायत में है। यहां निवास करने वाले शत-प्रतिशत लोगों ने आगे आकर कोरोना से बचाव हेतु टीका लिया है। यही जागरूकता सिमडेगा के ही ओडिशा बॉर्डर से सटे कुरडेग प्रखंड के चडरी मुंडा पंचायत स्थित जींस जरा कानी गांव के लोगों ने भी दिखाई है । सुदूरवर्ती गांव होने के बावजूद यहां के ग्रामीणों ने खुद के और अपने परिवार के स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए शत-प्रतिशत टीकाकरण कराया।

गांव के लोगों ने ही दिखाई सक्रियताः शत-प्रतिशत टीकाकरण के लिए गांव के लोग जिला प्रशासन की पहल पर आगे आये। गांव में पूर्व से ही परंपरा अनुसार प्रत्येक सप्ताह लोग एक

जगह एकत्र हो अपनी- अपनी बातों को साझा करते हैं। जिसके कारण गांव के सभी परिवारों में किसी भी मुद्दे पर एक राय होकर निर्णय लेने की समझ होती है। प्रत्येक सप्ताह सामाजिक कार्य में भाग लेना इनकी जिन्दगी का हिस्सा है। इन दोनों गांव में लोगों ने एक दूसरे की बातों, सरकार के जागरूकता अभियान और कोरोना से मृत्यु की गंभीरता को समझा।

यही वजह रही कि जिला प्रशासन के साथ निरंतर बैठक एवं आपसी समन्वय के कारण शत-प्रतिशत कोविड-19 टीकाकरण कार्य संपन्न हुआ। यहां के ग्रामीण इतने जागरूक हैं कि वे अपने गांवों में दूसरे राज्यों और जिला से गांव वापस आ रहे लोगों एवं उनके परिजनों को सामुदायिक भवन में 14 दिनों तक का क्वारनटाइन करते हैं।

उग्रवाद प्रभावित इलाके में भी बढ़ रही जागरूकता

पिछड़े और उग्रवाद प्रभावित इलाके में भी राज्य सरकार के जागरूकता अभियान का असर नजर आने लगा है। लातेहार जिला का उग्रवाद प्रभावित प्रखंड गारू इसका ताजा उदाहरण है। करीब 36 हजार आबादी वाले इस प्रखंड में निवास करने वाले ग्रामीण भी टीकाकरण के प्रति गंभीर हो रहे हैं। यहां 18 वर्ष से अधिक उम्र के करीब 40 प्रतिशत लोगों का टीकाकरण कार्य हो चुका है। जिला प्रशासन लगातार प्रखंड के सुदूरवर्ती गांवों में जाकर लोगों के बीच जागरूकता का संचार कर रहा है। दुमका के मसलिया प्रखंड स्थित रांगा पंचायत के गांवों में 85 प्रतिशत से अधिक टीकाकरण हो चुका है। वहीं शिकारीपाड़ा, दुमका और काठ-ीकुंड प्रखंड के कई गांवों में 70 प्रतिशत से अधिक टीकाकरण हो चुका है। प्रत्येक दिन टीका लेने वालों की संख्या में बढ़ोतरी दर्ज हो रही है।

फोटो न्यूज

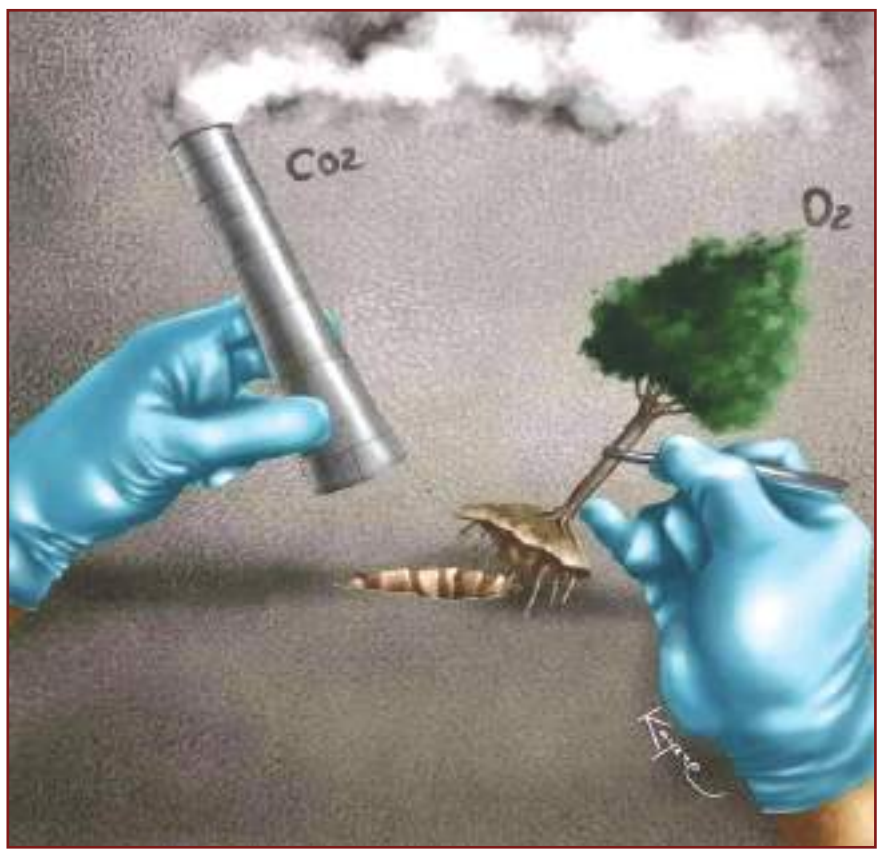

भाषाओं के साथ विलुप्त हो रही पुरखों की औषधीय जानकारी

जैसे-जैसे स्थानीय पारम्परिक भाषाई विविधता खत्म हो रही है, उसके साथ ही सदियों पुराने उपचार और औषधीय पौधों का ज्ञान भी खत्म होता जा रहा है

सदियों से हमारे पुरखे प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करके रहते आए हैं उन्होंने अपने अनुभवों के जरिए ऐसे अनगिनत औषधीय पौधों के बारे में ज्ञान अर्जित किया था जो किसी किताब किसी लेख में दर्ज नहीं हैं, वो बस उन गिने चुने लोगों के पास विरासत के रूप में हैं, जो उस खास भाषाओं के जानकार हैं। उन्होंने इसे विरासत की तरह पीढ़ी दर पीढ़ी संजो के रखा हुआ है, पर जैसे-जैसे यह पारम्परिक स्थानीय भाषाई विविधता खत्म हो रही है, उसके साथ ही यह सदियों पुराने उपचार और औषधीय पौधों का ज्ञान भी खत्म होता जा रहा है

इस पर यूनिवर्सिटी ऑफ ज्यूरिच के शोधकर्ता रेड्रिगो कैमारा लेरेट द्वारा किए एक शोध से पता चला है कि भाषाओं के विलुप्त होने के साथ ही औषधीय पौधों के बारे में जो सदियों पुराना ज्ञान है उसपर भी लुप्त होने खतरा मंडराने लगा है। शोध के अनुसार दुनिया में करीब 7,400 भाषाएं बची हैं, जिनमें से 30 फीसदी को इस सदी के अंत तक कोई बोलने-समझने वाला नहीं होगो इन भाषाओं के विलुप्त होने के साथ ही इन भाषाओं में संजोया जो अद्वितीय औषधीय ज्ञान है, उसको कितना नुकसान होगा उस बारे में हमारी समझ सीमित है। ऐसे में सबसे बड़ा सवाल यह है कि औषधीय पौधों के बारे में जो यह स्थानीय ज्ञान है वो किस हद तक अलग-अलग भाषाओं से जुड़ा हुआ है भाषाओं और पौधों के विलुप्त होने के साथ-साथ कितना स्थानीय पारम्परिक ज्ञान गायब हो सकता है।

इसे समझने के लिए शोधकर्ताओं ने उत्तरी अमेरिका, उत्तर-पश्चिम अमेज़ोनिया और न्यू गिनी पर शोध किया है,

यह तीनो क्षेत्र जैव विविधता के साथ-साथ सांस्कृतिक विविधता के भी धनी हैं शोधकर्ताओं के अनुसार इस क्षेत्र में औषधीय गुणों वाले 3,597 पौधे और उनके बारे में 12,495 तरह के औषधीय उपयोग और सेवाएं 236 स्थानीय भाषाओं से सम्बंधित हैं इनके बारे में जो औषधीय ज्ञान है, वो भाषाई रूप से अद्वितीय है, जिसका मतलब है कि उसके बारे में केवल एक भाषा में ही जानकारी उपलब्ध है। शोधकर्ताओं के अनुसार उत्तरी अमेरिका में 73 फीसदी औषधीय ज्ञान केवल एक भाषा में पाया जाता है इसी तरह उत्तर-पश्चिम अमेज़ोनिया में 91 फीसदी और न्यू गिनी में 84 फीसदी औषधीय पौधों के बारे में ज्ञान केवल एक भाषा में उपलब्ध है। ऐसे में सवाल यह है कि क्या यह जो अद्वितीय ज्ञान है वो ज्यादातर उन भाषाओं में है जो पहले ही खतरे में हैं। विश्लेषण के अनुसार उत्तरी अमेरिका में जहां 82 फीसदी पारम्परिक और अद्वितीय ज्ञान उन भाषाओं ने संजोया हुआ है जो पहले ही खतरे में हैं इसी तरह उत्तर-पश्चिम अमेज़ोनिया में यह आंकड़ा 66 फीसदी और न्यू गिनी में 18 फीसदी है यदि यह भाषाएं विलुप्त होती हैं तो इनके साथ यह ज्ञान भी विलुप्त हो जाएगो शोधकर्ताओं का मानना है कि ऐसा ही दुनिया के अन्य क्षेत्रों में भी होगो ऐसे में इस ज्ञान को भविष्य के लिए संरक्षित करने की जरुरत है

क्यों जरुरी हैं स्थानीय भाषाओं का संरक्षण?

पापुआ न्यू गिनी पर किए ऐसे ही एक शोध से पता चला है कि वहां जैसे-जैसी भाषाएं विलुप्त हो रही हैं वहां का स्थानीय ज्ञान भी खत्म होता जा रहा है पापुआ न्यू गिनी जहां 90 लाख लोग 850 भाषाएं बोलते हैं, दुनिया का सबसे भाषाई विविधता वाले स्थानों में से एक है। शोध से पता चला है कि वहां स्थानीय भाषाओं के बारे में जितना ज्ञान माता-पिता को है उतना उनके बच्चों को नहीं है अनुमान है कि उनकी अगली पीढ़ी में यह ज्ञान और घट जाएगो वहां स्थानीय भाषाओं के ज्ञान में जो गिरावट आ रही है, उसका असर प्रकृति के बारे में उनके पारम्परिक ज्ञान पर भी पड़ रहा है, उसमें भी पीढ़ी दर पीढ़ी कमी आती जा रही है। शिकार, मछली पकड़ना, खाद्य फसलें उगाना, जंगलों से मिलने वाली स्थानीय सामग्री से घर बनाना और साथ ही औषधीय पौधों के बारे में जो पारम्परिक ज्ञान है उसमें भी गिरावट आती जा रही है साथ ही स्थानीय भाषाओं के साथ ही वहां वर्षा वन में पेड़ पौधों और जानवरों के बारे में जो पारम्परिक ज्ञान है वो भी पीढ़ी दर पीढ़ी विलुप्त होता जा रहा है।

भाषा किसी भी संस्कृति की पहचान उसकी विरासत होती हैं वो सिर्फ शब्दों को ही नहीं संजोती वो उस भाषा के साथ सदियों पुराने ज्ञान को भी संजोए रहती है ऐसे में इन औषधीय पौधों और विरासत में मिले पारम्परिक ज्ञान को बचाने के लिए, इन स्थानीय भाषाओं को भी विलुप्त होने से बचाना अत्यंत जरुरी है। **ललित मौर्य**

केंद्र के आकांक्षी जिला योजना से 115 जिलों में कितना हुआ विकास?

स्टेट ऑफ इंडियाज एनवायरनमेंट रिपोर्ट इन फिगर्स 2021 से पता चला है कि भारत के आकांक्षी जिले विकास के पथ पर उम्मीद के मुताबिक प्रदर्शन नहीं कर पाए हैं।

एजेंसियां : केंद्र सरकार ने जनवरी 2018 में देश के 115 अति पिछड़ों जिलों को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने के उद्देश्य से महत्वाकांक्षी ''आकांक्षी जिला कार्यक्रम'' की शुरुआत की थी। विकास के मापदंड में पिछड़ चुके इन जिलों को कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा, वित्तीय समावेशन और बुनियादी सुविधाओं के स्तर को ऊंचा करना था। कार्यक्रम को शुरू हुए तीन साल हो चुके हैं और इन तीन सालों में सभी जिलों ने प्रगति की है। हालांकि इस फ्लैगशिप योजना को कृषि और स्वास्थ्य के क्षेत्र में हो रहे विकास कार्यों को प्राथमिकता देने की जरूरत है। स्टेट ऑफ इंडियाज एनवायरनमेंट रिपोर्ट इन फिगर्स 2021 से पता चला है कि भारत के आकांक्षी जिले विकास के पथ पर उम्मीद के मुताबिक प्रदर्शन नहीं कर पाए हैं। सरकार द्वारा जारी आंकड़ों के विश्लेषण से पता चला है कि इस योजना की शुरुआत के बाद से कृषि और जल के क्षेत्र में 20 फीसदी से भी कम प्रगति हुई है। आकांक्षी जिलों पर किया यह विश्लेषण सरकार द्वारा जुलाई 2018 और फरवरी 2021 के बीच की तुलनात्मक प्रगति रिपोर्ट पर आधारित है। रिपोर्ट के मुताबिक यदि कृषि क्षेत्र में निगरानी किए गए पांच संकेतकों के आधार पर देखें तो ओडिशा के बालांगीर जिले में कृषि और जल के क्षेत्र में हुई प्रगति सबसे धीमी रही है। इन संकेतकों में वितरित किए गए मृदा स्वास्थ्य कार्डों की संख्या, पशुओं का किया गया टीकाकरण, सूक्ष्म सिंचाई के तहत क्षेत्र, कृत्रिम गर्भाधान के वर्रेज, इलेक्ट्रॉनिक तौर पर मंडियों से जुड़ाव शामिल हैं।ओडिशा में कालाहांडी ने इस मामले में थोड़ी बहुत प्रगति जरूर की है, लेकिन उसकी रफ्तार अभी भीकाफी सुस्त है। स्वास्थ्य और पोषण के क्षेत्र में हुई प्रगति भी कोई खास अच्छी नहीं है। विश्लेषण के अनुसार, 69 आकांक्षी जिलों या यह कहें कि 60 फीसदी जिलों ने स्वास्थ्य और पोषण के क्षेत्र में 20 फीसदी से भी कम प्रगति की है। इस मामले में ओडिशा के नबरंगपुर और मलकानगिरी ऐसे आकांक्षी जिले थे जिनकी रफ्तार सबसे धीमी थी। वित्तीय समावेशन और कौशल विकास के क्षेत्र में 30 जिलों ने 20 प्रतिशत से कम प्रगति की है। हालांकि उत्तर प्रदेश के जिले बेहतर स्थिति में हैं। प्रदेश के कुल आठ जिले- बलरामपुर, सिद्धार्थनगर, सोनभद्र, चंदौली, फतेहपुर, चित्रकूट, श्रावस्ती और बहराइच आकांक्षी जिलों की सूची में शामिल हैं। ये जिले सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाले जिलों में शामिल है।

बलरामपुर को तो अव्वल रैंकिंग मिली है। सिद्दार्थनगर भी चोटी के पांच जिलों में शामिल है। गौरतलब है कि भारत पहले ही सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी) के 17 लक्ष्यों में से 10 को पाने के लिए संघर्ष कर रहा है, जिसमें ''गरीबी का पूर्णतः उन्मूलन'' और ''बेहतर स्वास्थ्य और कल्याण'' जैसे लक्ष्य शामिल हैं। ऐसे में अगर आकांक्षी जिले इन लक्ष्यों को हासिल करने के लिए बेहतर प्रदर्शन नहीं करते हैं तो भारत की राह और मुश्किल हो सकती है।

गंडक नदी के घड़ियालों का आशियाना उजाड़ सकता है भारत - नेपाल अंतरराष्ट्रीय जलमार्ग

पुष्यमित्र

- ***घड़ियालों, सोंसों और कई दुर्लभ, संकटग्रस्त एवं अतिसंकटग्रस्त जीव का बसेरा है बिहार में बहने वाली गंडक नदी।***
- ***नेपाल को जलमार्ग उपलब्ध कराने के लिए इस नदी को जलमार्ग के रूप में विकसित करने पर चल रहा है काम।***
- ***विशेषज्ञों का मानना है कि जलमार्ग परियोजना से इस विलक्षण और अछूती नदी की जैव विविधता को खतरा हो सकता है।***

बंदरगाह, नौवहन और जलमार्ग के केंद्रीय राज्य मंत्री मनसुख मांडविया ने 18 मार्च, 2021 को लोकसभा में यह जानकारी दी थी कि बिहार के सारण जिले के कालू घाट में गंडक नदी पर एक शिपिंग टर्मिनल बनाया जा रहा है। उन्होंने भाजपा सांसद राजीव प्रताप रूडी के सवालों के जवाब में यह भी कहा कि कालू घाट पर 2.5 मीटर का एक शिपिंग ड्राफ्ट भी मौजूद है, वहां से नेपाल की राजधानी काठमांडू तक मझोले आकार के मालवाहक जहाज चला करेंगे। इस बयान के साथ केंद्र सरकार ने एक तरह से एक बार फिर इस बात पर मुहर लगायी है कि वह गंडक नदी में मझोले आकार के जहाज चलाने की तैयारी कर रही है और वे जहाज नेपाल के काठमांडू तक जायेंगे।

गंडक नदी पर नौवहन की यह तैयारी नयी नहीं है। केंद्र सरकार इससे गंगा की तरह ही एक नौवहन मार्ग में बदलने की बात करती रही है। यह प्रस्तावित राष्ट्रीय जलमार्ग 37 है, जो अंतरराष्ट्रीय महत्व का है, क्योंकि इससे भारत के साथ-साथ नेपाल के भी हित जुड़े हैं। वह नेपाल जो एक लैंड लॉक देश है और जिसे अब तक समुद्री तट से अपने माल को लाने के लिए कोई बेहतर रास्ता नहीं मिला है। इस जलमार्ग के बनने से बंगाल की खाड़ी से राष्ट्रीय जलमार्ग एक होते हुए उसके जहाज गंडक नदी के जरिये नेपाल की राजधानी काठमांडू तक जा सकते हैं।

हालांकि इस जलमार्ग का डीपीआर 2016 में ही तैयार हो गया था, मगर अब तक लोगों को लग रहा था कि गंडक नदी के छिछलेपन और इसकी खास किस्म की जैव विविधता को देखते हुए शायद ही इस जलमार्ग पर काम शुरू किया जायेगा। मगर केंद्रीय मंत्री मनसुख मांडविया के इस बयान के बाद लोगों का यह भ्रम दूर हो गया और यह समझ में आ गया कि सरकार इस प्रोजेक्ट को लेकर गंभीर है। इसके बाद गंडक नदी की जैव विविधता को लेकर चिंतित रहने वाले और उसके लिए काम करने वाले पर्यावरण संरक्षकों की चिंता बढ़ गयी है।

घुमक्कड़ चरवाहों पर कोरोना और चारे की मार

राजस्थान के घुमंतू चरवाहे कोविड-19 महामारी की वजह से अनिश्चितताओं के शिकार हो रहे हैं। बार-बार लॉकडाउन लगने की वजह से वे अपनी यात्रा बीच में ही छोड़ने को मजबूर हैं।

घुमंतू चरवाहे अपनी यात्रा के दौरान रास्ते में चारे और पानी के लिए किसान परिवारों के ऊपर निर्भर रहते हैं। फिलहाल इंदिरा गांधी नहर की मरम्मत चल रही है और यह बंद है। इसलिए रास्ते में इन्हें पानी और चारा खोजना मुश्किल और महंगा पड़ रहा है।संसाधनों में कमी की वजह से इन्हें खुद के लिए और अपने पशुओं के लिए भोजन-पानी को लेकर दिक्कत हो रही थी। तंग आकर इन चरवाहों ने अपनी यात्रा दो महीने में ही खत्म कर दी है और वापस अपने घर लौट आए हैं।

राजस्थान में करीब चार लाख लोग अपनी रोजी-रोटी के लिए चरवाही पर निर्भर हैं। संसाधनों की कमी समेत तमाम चुनौतियों से निपटने में माहिर होने के लिए मशहूर गडरिया समुदाय महामारी के सामने विवश होता दिख रहा है। बदलते परिवेश में आम ग्रामीण समाज धीरे-धीरे अपने को इस नई चुनौती के हिसाब से ढाल रहा है पर गडरिया समुदाय इसमें पिछड़ता दिख रहा है। इस साल राजस्थान में राज्य-स्तर पर लगे लॉकडाउन में यह समस्या खुल कर सामने आई है।

राजस्थान के रेगिस्तान में रहने वाले ये ऋतु-प्रवासी चरवाहे गर्मी के दिनों में अपने राज्य से पलायन कर पंजाब और हरियाणा का रुख करते हैं। हरियाली की तलाश में। अमूमन मार्च के आखिर में गर्मी बढ़ने के साथ पलायन का यह दौर शुरू होता है और जुलाई में मॉनसून के आगमन के साथ इनकी घर-वापसी होती है। पर इन रास्तों के संसाधन तेजी से खत्म हो रहे हैं, इसलिए चरवाहों के दूर तक पलायन की प्रकृति भी पिछले कुछ दशकों में बदली है। वैसे चरवाहे जिनके पास 250 से 300 के करीब या उससे अधिक पशु होते हैं, उन्होंने पैदल चलने के बजाए ट्रकों में भरकर पशुओं को ले जाना शुरू कर दिया है। इन पशुओं को राज्य के सीमा पर ले जाया जाता है जहां हरियाली मौजूद होती है। इंदिरा गांधी नहर के बगल से गुजरने वाले रास्ता इनको पसंद है क्योंकि वहां जरूरत भर चारा और पानी उपलब्ध होता है। फसलों की कटाई के बाद खेत में बचे अवशेष से अच्छी चरवाही हो जाती है और नहर में पीने के लिए पानी उपलब्ध होता है।

जब कोविड-19 महामारी जैसी समस्या नहीं थी तब खेत के मालिक इनके पशुओं को खेत में फसल-कटाई के तुरंत बाद बचे अवशेष चरने कीइजाजत दे देते थे। बदले में किसानों को अपने खेत में इन पशुओं के छोड़े गोबर इत्यादि से प्राकृतिक खाद मिल जाया करती थी। लेकिन कोविड-19 महामारी की वजह से लोगों में डर बढ़ा है और इन इलाकों में रहने वाले लोगों का चरवाहों और उनके पशुओं के प्रति रुख बदला है। इस वर्ष नहर के बंद होने से भी इनकी मुश्किलें बढ़ीं हैं। इस इलाके में पानी की कमी हो गई है। इंदिरा गांधी नहर बीते 70 दिनों से (मार्च 21 से) मरम्मत की वजह से बंद है। इनता ही नहीं, फसल के बचे अवशेष जैसे पराली को पंजाब, हरियाणा और राजस्थान के किसानों ने जलाना भी शुरू कर दिया है। फिर खेत की आग बुझाने के लिए बड़ी मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है। नहर बंद होने की सूचना मिलने की वजह से किसानों ने कोशिश की कि पानी रहते उनका काम निपट जाए और इसलिए उन्होंने इस वर्ष समय से पहले ही फसल की कटाई कर दी और इस तरह पराली में आग भी पहले ही लगा दी। इस बात का असर चरवाहों पर भी हुआ। जब चरवाहे मार्च के अंत में अपने पशुओं के साथ इन इलाकों में गए तो वहां चारे की कमी हो गयी। इन्हीं कारणों से इन चरवाहों ने अब घूमना भी छोड़ दिया है।

जंजाल बन रहे हैं त्यागे गये आवारा मवेशी

डी के सदाना

आवारा पशुओं के लिए गौशाला नहीं, उपलब्ध हैं दूसरे विकल्प आवारा मवेशियों की समस्या दूर करने के लिए गोशालाओं से अलग दूसरे विकल्पों की ओर देखना जरूरी है

पूरे भारत में सड़कों पर घूमतीं, कूड़ा खाती गायों के नजारे आम हैं। आवारा मवेशियों की समस्या दूर करने के कई सरकारी प्रयासों के बावजूद यह खत्म नहीं हुई है। हाल ही में राष्ट्रीय राजधानी के चार नगर निकायों में एक नई दिल्ली नगर पालिका परिषद (एनडीएमसी) ने इस समस्या से छुटकारा पाने के मकसद से एक महत्वाकांक्षी योजना की घोषणा की है।

एनडीएमसी के अनुसार, मवेशियों पर एक चिप लगाई जाएगी जिसमें उनके मालिकों की जानकारी होगी। इस चिप का उपयोग करते हुए अधिकारी मवेशी के मालिकों का पता लगा सकेंगे और प्रत्येक बार मवेशी को खुला छोड़ने पर 25 हजार रुपए का जुर्माना लगाएंगे। मवेशियों का परित्याग इसलिए दुर्भाग्यपूर्ण है क्योंकि ये काफी महत्वपूर्ण संसाधन होने के साथ ही पोषण सुरक्षा में योगदान और स्थानीय आजीविका को मजबूती देते

हैं। केंद्रीय मत्स्यपालन, पशुपालन और डेयरी मंत्रालय द्वारा जनवरी 2020 को जारी 20वीं पशुधन जनगणना के अनुसार, भारत में 50 लाख से अधिक आवारा मवेशी हैं। देश में आवारा मवेशियों के बढ़ने के कई कारण हैं। पिछले कुछ दशकों में स्वदेशी मवेशियों की उपेक्षा हुई है और क्रॉसब्रीडिंग (संकर) पर अत्यधिक ध्यान केंद्रित किया गया है। मशीनीकरण बढ़ने व गोहत्या पर राष्ट्रीय प्रतिबंध ने इस समस्या को और बढ़ा दिया है।

आवारा मवेशियों में गाय, बैल या बछड़े मुख्य रूप से शामिल होते हैं जिन्हें अनुत्पादक होने के कारण छोड़ दिया जाता है। इनमें कम दूध देने वाली गाय भी शामिल हैं, जिनके ज्यादातर मालिक शहरों में रहने वाले होते हैं। ये मालिक दिन के समय अपने मवेशियों को खुला छोड़ देते हैं। आवारा मवेशी जहां शहरों में यातायात की परेशानी का कारण बनते हैं, वहीं गांवों में फसलों को नुकसान पहुंचाते हैं। समस्या विकराल हो चुकी है । यही वजह है कि राष्ट्रीय गोकुल मिशन के तहत बनी गोशालाएं अधिक प्रभावी नहीं हो पा रही हैं।

पशुधन जनगणना बताती है कि आवारा मवेशियों की सबसे अधिक आबादी वाले 10 राज्यों में से सात में 2012 से 2019 के बीच इनकी संख्या बढ़ी है।अंतः केंद्र को आवारा मवेशियों को कम करने के लिए अपनी रणनीति को व्यापक बनाने की जरूरत है। सबसे पहले मवेशियों की अपनी समझ में सुधार की जरूरत है। खासकर उन उपेक्षित नस्लों को समझना जरूरी है जिन्हें लोकप्रिय नस्लों के सामने दरकिनार किया गया है।

भारत में मवेशियों को चार व्यापक समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है- परिभाषित नस्लें, समरूप नस्लें, संकर और गैर-वर्णनात्मक । परिभाषित नस्लों में गीर, साहीवाल, लाल सिंधी, थारपारकर और राठी जैसी 50 सबसे मूल्यवान स्वदेशी प्रजातियां शामिल हैं। ये मवेशियों की कुल आबादी का लगभग 20 प्रतिशत हैं।

ये नस्लें क्षेत्र-विशिष्ट हैं और स्थानीय जलवायु स्थितियों के अनुकूल हैं। इस नस्ल के मवेशी भोजन की कमी और जलवायु के उतार-चढ़ाव का सामना करने में सक्षम हैं। उदाहरण के लिए उत्तरी और पश्चिमी राज्यों में पाई जाने वाली नस्लों में अधिक दूध देने की क्षमता होती है, जबकि दक्षिणी राज्यों में ये नस्लें भार ढोने के लिए प्रयोग में लाई जाती हैं। इन्हें भार ढोने के लिए आदर्श माना जाता है। पूर्वी राज्यों में पाई जाने वाली इन नस्लों का इस्तेमाल दूध और भार ढोने के लिए किया जाता है। इनकी इन्हीं खूबियों और रखरखाव में कम खर्च के कारण इनका कभी परित्याग नहीं किया जाता।

418 साल के सरेई बाबा के बारे में जानते हैं आप?

पुरूषोतम ठाकुर

पेड़ की उम्र उसकी मोटाई देखकर या नापकर तय होती है। इसके अलावा कार्बन डेटिंग से भी पेड़ का उम्र का पता चलता है। चलिए, आज मिलते हैं एक ऐसे पेड़ से, जिसकी उम्र 50 या सौ साल नहीं बल्कि 418 साल है। यह साल का पेड़ है, जिसे स्थानीय भाषा में सरेई पेड़ भी कहा जाता है। इस पेड़ की ऊंचाई 45 मीटर है और गोलाई 450 मीटर है। यह बुजुर्ग पेड़ छत्तीसगढ़ राज्य के धमतरी जिला स्थित दुगली जंगल में है।

छत्तीसगढ़ के राजधानी रायपुर से तक़रीबन 115 किमी दूर दुगली जंगल में कक्ष क्रमाक 255 में यह साल का पेड़ इस तरह से सैकड़ों सालों से सीना तानकर खड़ा है। पेड़ की उम्र उसकी मोटाई देखकर या नापकर तय होती है। इसके अलावा कार्बन डेटिंग से भी पेड़ का उम्र का पता चलता है। उसी प्रकार कटे हुए पेड़ का रिंग देखकर भी पेड़ की उम्र का सही पता चलता है। इस पेड़ को वनविभाग ने मदर ट्री का दर्जा दिया हुआ है। साथ ही इसे संरक्षित किया हुआ है। इस पेड़ को ''सरेई बाबा'' कहा जाता है।

ऐरावत मधुकर, सहायक परिक्षेत्र अधिकारी, देवगांव जो पहले दुगली परिक्षेत्र में कार्यरत थे का कहना है- '' 2013 में यह पेड़ जब हमारे नजर में पड़ा तो इसे रेंज अधिकारी पीआर वर्मा ने इस विशालकाय वृक्ष को संरक्षित करने और इसे मदर ट्री का दर्जा दिया, जबकि तत्कालीन एसडीओ टीआर सोनी ने इसे ''सरेई बाबा'' का नाम दिया।'' उन्होंने आगे कहा '' बाद में जब

हमने अंग्रेजों के समय के वर्किंग प्लान देखा तो पता चला कि तक़रीबन 200 से 250 सौ साल पहले जब यह पेड़ 180 साल का था, तब इसे संरक्षित किया था और इसे मदर ट्री का दर्जा दिया था। मधुकर बताते हैं कि इस पेड़ की गोलाई 15 साल में 45 से 50 से.मी. बढ़ता है। उसके बाद हर साल औसतन एक सेमी तक बढ़ता है। यहाँ के साल पेड़ एशिया के टॉप क्वालिटी का माने जाते है। यही वजह है कि अंग्रजों के समय में रेलवे की पटरी पर स्लीपर के बतौर इसका उपयोग होता था इसलिए अंग्रेजों ने इन स्लीपरों की ढुलाई के लिए रायपुर से बोरेई तक छोटी लाइन की ट्रेन चला रहे थे। सरेई या साल पेड़ से आदिवासियों का सांस्कृतिक जुड़ाव है। यह पेड़ आदिवासियों के लिए महुआ पेड़ की ही तरह बहुत उपयोगी है।

दुगली के एक युवक सुखनंदन मरकाम ने साल पेड़ों के महत्व के बारे में जानकारी देते हुए कहा ''इसका लकड़ी इमारती लकड़ी के रूपमें उपयोग किया जाता है क्योंकि यह काफी मजबूत और टिकाऊ है। इस पेड़ से निकलने वाले लासा से धूप बनाया जाता है। इसके बीज को इकट्ठा करके गाँव वाले बेचते हैं। इसके तेल का उपयोग साबुन आदि चीजों में उपयोग किया जाता है। जंगल में कई महिलाएं साल बीज बीनते मिली। उनमें से एक आदिवासी महिला सुमित्रा ने कहा झ ''सरेई (साल) पेड़ हमारे लिए बहुत काम का चीज है। अभी हम इसके बीज 20 रुपये किलो में बेच रहे हैं, और बारिश के दिनों में इस पेड़ के नीचे जमीन के अंदर बोडा नामक मशरूम मिलता है जिसकी इस क्षेत्र में काफी मांग है। इसकी कीमत तीन चार सौ रुपये तक होती है।

वन विभाग ने 2018 में इस पेड़ की उम्र 415 साल बताई थी। साल पेड़ की औसतन उम्र डेढ़ सौ साल मानी जाती है। साल का बोटानिकल या वैज्ञानिक नाम है- शोरिया रोबोस्टा है। यह डीप्तेरोकापैसी कुल का सदस्य है।

धमतरी के नगरी क्षेत्र के जंगल साल के बड़े बड़े और मजबूत पेड़ के लिए काफी प्रसिद्द रहे हैं।साल के पेड़ के 9 प्रजातियाँ है। भारत के अलावा श्रीलंका और बर्मा में इस पेड़ के 9 प्रजातियाँ हैं. साल पेड़ हिमालय की तलहटी से लेकर 3000 फिट की उंचाई तक और असम, उत्तर प्रदेश, बंगाल, बिहार, झारखण्ड, ओडिशा , छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश आदि राज्यों के जंगल में साल के पेड़ मिलता है।

E ZONE CARE

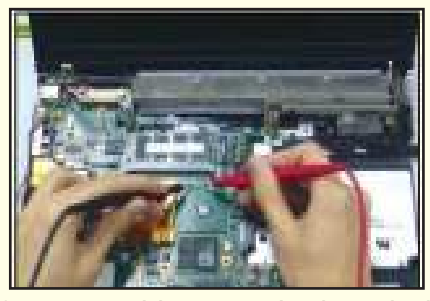

Software Problem, Motherboard Chip-Level Repair, Laptop AC Adapter Repair and Replacement, Laptop LCD Screens Repair and Replacement, Dead Laptop Problems, No Display Problem, LCD Dim Display Problem, LCD White Display Problem, BIOS Password Problem, all type of Laptop repair and service

• **Repair your laptop with 3-month warranty.**

info@ezonecare.in, ezonecare.in
Rospa Tower 3RD Floor, Main Road, Ranchi 93108 96575, 70047 69511
Mon - Fri 10:30 am - 7:00 pm
SUNDAY CLOSED

अखबार के स्वामी सन कम्युनिकेशन के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक मनोरंजन सिंह द्वारा मेसर्स डी. बी. कॉर्प लिमिटेड,प्लॉट नं535 एवं 1272 ललगुटवा पुलिस स्टेशन, रातू, रांची (झारखंड) से मुद्रित एवं सन कम्युनिकेशन,अपोजिट कब्रिस्तान गेट नं.-2,रातू रोड, रांची- 834001 (झारखंड) से प्रकाशित। संपादकः एम.के.शर्मा * (पी.आर.बी. अधिनियम के तहत खबरों के चयन के लिये उत्तरदायी)आर.एन.आइ. पंजीयन क्रमांक : **JHAHIN/2019/78094**, email:greenrevolt2019@gmail.com. ☎ 0651-2283018, 8539978825, 8825374626. समस्त विवाद रांची न्यायालय के अधीन होंगे।